सच क्या ? है

गहन चिंतक – सिद्धांतज्ञ

आचार्य विनम्रसागर

कृति :

सच क्या है ?

शुभाशीष :

जैनाचार्य श्री विरागसागरजी महाराज

लेखक

प्रखरवक्ता आचार्य विनम्रसागर

प्रथमावृत्ति–2200 प्रतियाँ, जूनिया, सन्–2005
द्वितीयावृत्ति– 2200 प्रतियाँ, भीलवाड़ा, सन्–2005
तृतियावृत्ति – 2200 प्रतियाँ, अजमेर, सन्–2007
चतुर्थ वृत्ति – 2200 प्रतियाँ, ..., सन्–2016
पंचमा वृत्ति – सन् 2020

प्रकाशक
धर्म प्रभावना ट्रस्ट न्यास सीपुर 9828613614

प्राप्ति स्थान
सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ, भिण्ड
देवेन्द्र जैन, बड़ी बजरिया, बीना (07580-223344)
सीपुर समता तीर्थ धाम, सीपुर 9828613614

कम्प्यूटर डिजाइन एवं मुद्रक :- मुकेश जैन, मो.: 94145–55103

आर्यन् एजेन्सीज्

इन्दिरा बाजार, अजमेरी गेट, जयपुर (राज.)

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

पुनः प्रकाशन हेतु ज्ञानदान राशि 15/– रू. मात्र

पहिले इसे पढ़ें

स क नाम सुनत ी शरीर का रोम–रोम Atention में आ ाता है तो रोयां रोयां ु कत हो उठता है। सच में, सच का अस्तित्व ही बहुत प्रभावशाली है। झूंठ को झूंठ मानना सरल है, झूंठ को सच मानना भी सरल है, सच को झूंठ मानना भी सरल है, लेकिन सच को सच मानना कठिन है। सच को आचरित करना और कठिन है तथा सच को प्राप्त कर लेना सबसे कठिन है।

सच प्राप्त होते ही व्यक्ति की जीवनधारा बदल जाती है, सच को खोजने के तरीके कई हो सकते हैं लेकिन सच एक ही है। सच की उपलब्धि सच के दरबार में ही संभव है। सच का दरबार ही जिन्दगी में सच का द्वार खोलकर गलत धारणाओं को ध्वंस कर सकता है। आज व्यक्तियों में भौतिकता इस तरह छायी हुई है और आदमी इतना व्यस्त है कि सोचने समझने का समय ही नहीं है, वह अंधी दौड़ में शामिल है और दौड़ता चला जा रहा है। उसके अंदर कषायें–राग–द्वेष– वैमनस्यता ईर्ष्याओं अभिमान आदि भरे हुए हैं। धर्म के स्थल पर भी आदमी कषायों को दिखाता हुआ अपने आपको धर्मी समझता है।

सत्य कड़वा होता है, ऐसा लोग कहते हैं लेकिन सही बात यह है कि सत्य कड़वा लगता है, होता नहीं। कड़वा इसलिए लगता है क्योंकि हमारे अंदर गलत धारणा की, अंधकार की, पक्षपात की गोली दबी है, जब तक वह अंदर रहेगी तब तक सत्य कड़वा रहेगा। यदि सत्य कड़वा है तो भगवान कड़वे हुए फिर सत्य को सभी लोग क्यों चाहते हैं ? जैसे– मलेरिया से पीड़ित व्यक्ति को मौसमी का रस कड़वा लगता है, ठीक वैसे ही अहंकार से पीड़ित व्यक्ति को सत्य कड़वा लगता है। मौसमी का रस कड़वा नहीं है, वैसे ही सत्य कड़वा नहीं है।

हमने अपने चिंतन–मनन से सम्यक्त्व का आधार लेकर सत्य के बारे में गुरुदेव के शुभाषीष से आज के परिवेश को देखते हुए नवीन पीढ़ि के लिए कुछ लिखा है जो अवश्य ही सबको सही मार्गदर्शन देकर सम्यक्त्व की ओर प्रेरित करेगा, यही मेरी भावना है।

हमारे चिंतन–मनन–लेखन में सारी शकित गुरुदेव की अनुकंपा और परम आशीष की है, ऐसे गुरुवर के द्वय चरणों में त्रयभक्तियुत् विनम्र नमन्–3

-Acharya Vinamra Sagar

अनुक्रमणिका

1. सच क्या है ? 1
2. सत्य पाने का तरीका 3
3. स्याद्वाद के सात भंग 5
4. स्याद्वाद से अनेकान्त की सिद्धि उदाहरण 6
5. श्रद्धान क्या है ? 9
6. विचार और श्रद्धा में अन्तर 10
7. मूर्ख व मूढ़ में अन्तर 14
8. भूले व भोले में अन्तर 14
9. श्रद्धान की विशेषताएँ 15
10. श्रद्धान- विश्वास में अंतर 17
11. पक्षपात व श्रद्धान में अंतर 18
12. हठाग्रह व श्रद्धान में अंतर 19
13. पंथ व श्रद्धान में अंतर 20
14. तेरापंथ और बीस पंथ क्या है 21
15. आज के श्रद्धान पर डालिए नजर 24
16. सही श्रद्धा की शक्ल 27
17. सत्य पाने की योग्यता 28
18. सत्य की उपलब्धि होने पर अभिव्यक्त लक्षण 30
19. सत्य की उपलब्धि कहां हो सकती है 31
20. सत्य विश्वास से और प्राप्त कर के 32
21. सत्य एक पर रूप तीन 33
22. सत्य एक, पर पाने के तरीके बहुत 34
23. सत्य उपलब्धि के लक्षण 36
24. अंधी श्रद्धा कैसी 38
25. अंधी व आँख वाली श्रद्धा में अंतर 39
26. सत्य पाने वाले का ज्ञान प्रामाणिक 39
27. सत्य में दोष कैसे लगते हैं ? 40
28. स्वाभिमान-अभिमान-बहुमान 41
29. मद व घमण्ड में अंतर 41
30. सत्य ज्ञाता में मद नहीं होते 41
31. कूप मण्डूक (मेंढक) और हंस 43
32. उपसंहार 44

सच क्या है?

सत् शब्द से सत्य बना है। सत् का मतलब है, वस्तु का सार। सार वस्तु की वह अन्तिम अवस्था हे, जिसको पाने के लिए वह वस्तु बनी थी, जैसे संतरे को छीलकर देखें तो क्या निकलेगा ? रसभरी बिखर जायेंगी। संतरा किसलिए है ? रस प्राप्त करने के लिये यदि रस प्राप्त कर लिया है तो संतरे का छिक्कल आदि बेकार हो जाता है। नींबू में उसका रस मुख्य है; लेकिन वह सत् नहीं है, सत् उससे भी ऊँची वस्तु है रस में पानी भी है, सत् वह है जिसमें कुछ भी नहीं मिला हो। जैसे नींबू का रस और रस के बाद टाटरी, वैसे ही संतरे का रस और रस से एसेंस Essence जीव में सत् रूप ज्ञान है। क्योंकि सारी साधना ज्ञान की उपलब्धि के लिए है, यदि ज्ञान पूर्ण हो गया है, फिर साधना करने की कोई जरूरत नहीं है। सिद्ध भगवान को साधना करने की कोई जरूरत नहीं है। सत् सार है और यण् प्रत्यय आत्मसात् करने का भावात्मक करने का, हृदयंगत करने का है सत् Noun है लेकिन यण् प्रत्यय लगर सत्य Adjective हो जाता है Adjective वह होता है जो किसी Noun में आत्मसात् होता है, उसकी विशेषता को बताता है, जैसे True लेकिन सत्य का मतलब ही है जो हृदय में आत्मसात् है, हृदय से बाहर सत्य कुछ नहीं, हमारे हृदय में जो भी होगा वह सत्य होगा, बाहर की वस्तु सत्य है या नहीं यह भी हमारे हृदय के सत्य पर निर्भर करता है। हमारे हृदय ने गलत को सत्य स्वीकार कर लिया है तो सत्य सामने होगा पर हम उसे स्वीकार नहीं करेंगे। हमारे लिये वह असत्य ही होगा यदि हमारे हृदय में सत्य है तो हमें सत्य ही स्वीकार होगा असत्य नहीं।

धर्म एक है लेकिन अपने-अपने मत में धर्म को स्वीकारने की पद्धति अलग-अलग है ये बात सही है कि सबका लक्ष्य पूर्णता को उपलब्ध होना है, होंगे या नहीं इससे अनभिज्ञ, कोई हुए भी या नहीं इससे अनभिज्ञ लोग, सम्प्रदाय की हठाग्रता को नहीं छोड़ पाते हैं, यदि हम दार्शनिक बनकर सत्यता को खोजने का प्रयत्न करेंगे और सभी तर्कों पर खरा उतरने का प्रयत्न करेंगे तो वीतराग धर्म ही ऐसा नजर आयेगा, जो सत्य को उपलब्ध होकर पूर्णज्ञान की उपलब्धि करायेगा, जिसमें सैकड़ों उदाहरण मिल जायेंगे कि अभी तक इस पथ पर चलकर कितने लोग सफल हुए ? कौन होंगे ? और कौन नहीं हो सकते ? सत्य पाने के लिए श्रद्धान सहित दार्शनिक बनना परम

आवश्यक है।

सत्य आमूल-चूल जीवन को मोड़ देता है, परमात्मा से जोड़ देता है। जीवन के आनंद का निचोड़ देता है और असत्य जीवन को तोड़-मरोड़ देता है। सत्य एक ऐसी ऊष्मा है, जिसके अंदर प्रवेश होते ही हृदय कमल पूरा खिल जाता है। सत्य को प्राप्त किये बिना कोई तीर्थंकर पद को प्राप्त नहीं हो सकता है।

जितना Strong सत्य जीवित रूप में होगा हमें सत्य उतनी ही जल्दी वैसा ही सत्य उपलब्ध होगा। कमजोर सत्य के सामने गहरा अनुभव नहीं हो सकता है, क्षायिक सत्य की प्राप्ति केवल तीर्थंकर परमात्मा के मूल चरणों में कर्मभूमि में केवल मनुष्य को ही हो सकती, स्त्रियों को नहीं; क्योंकि स्त्रियों में इतना Strong Truth संभालने की क्षमता नहीं होती है।

हमारा अंतिम स्थान (Salvation) मोक्ष है, उसके आगे कोई मार्ग नहीं है; लेकिन मंजिल और हमारी जमीन के बीच करोड़ों सीढ़ियाँ हैं, प्रथम सीढ़ी पर कदम रखे बिना दूसरी-तीसरी सीढ़ी पर पहुँचना असंभव है। प्रथम सीढ़ी पर कदम वही रख सकता है, जो सत्य को उपलब्ध हुआ है। सत्य ही मंजिल का निश्चय कराता है और सत्य ही पहला कदम सीढ़ी पर रखने की ऊर्जा प्रदान करता है, यदि किसी व्यक्ति को प्राप्त करने के लिए उसके तीन मंजिल के घर पर आप गये वहाँ आपको निर्णय हुआ कि यही घर है फिर ऊपर होने का निश्चय हुआ तभी उसकी पहली सीढ़ी पर कदम बढ़ेगा अन्यथा नहीं वैसा ही मोक्ष मार्ग में समझना चाहिए।

सत्य सार्वभौमिक है। इसे प्राप्त करने के लिये योग्यता होना जरूरी है, योग्यता के बिना सत्य पाना चाहें, यह तो वैसा ही है जैसे एक बाँझ स्त्री, पुत्र को चाहें। एक किसान पत्थर के पहाड़ पर चावल की खेती करना चाहे। सत्य पाने के लिये जरूरी नहीं है कि विशेष सम्प्रदाय जैसे- जैन, मुस्लिम, सिख, ईसाई इन्हें ही प्राप्त होगा, यह वह हीरा है, जिस पर योग्यता का अधिपत्य है। अयोग्यता का नहीं। हम क्या करें कि अयोग्य से सत्य पाने के योग्य हो सकें तो आईये आगे देखते हैं कि स्याद्वाद और अनेकांत क्या है?

सच पाने का तरीका

भगवान महावीर के सिद्धान्त को जानो या प्रकृति को जानो एक ही बात है, भगवान महावीर को मानो या प्रकृति को मानो एक ही बात है। प्रकृति में जो-जो हुआ था, जो-जो हो रहा है और जो-जो होगा- वही महावीर ने कहा है- महावीर भगवान वह नहीं कह सकते जो प्रकृति में घटेगा नहीं। दिव्यदृष्टि के धारी भगवान महावीर, जो घटा नहीं उसे भी जो घटा उसे भी जो घट रहा उसे भी, उसी तरह देखते हैं जैसे हम, जो घट रहा है, उसे देखते हैं। कोई कहे ऐसा नहीं हो सकता, भूत की पर्याय बताना संभव है, लेकिन भविष्य की पर्याय बताना संभव कैसे हो सकता है? भूत की तो हम भी बता सकते हैं, वर्तमान की भी बता सकते हैं। दिव्यदृष्टि का मतलब ही है जो हम नहीं देख सकते, वह देख सकती है।

जब आत्मा परम निर्मल विशुद्ध दृष्टि से युक्त हो जाती है तब आत्मा को स्वयमेव ही दिव्यदृष्टि प्राप्त हो जाती है। इस दिव्य दृष्टि में वस्तु की सारी अवस्थायें नजर आती हैं, ऐसी अवस्था में वस्तु की सभी अवस्थायें वह दिव्यदृष्टि वाला स्वीकार कर ले तो कोई आश्चर्य नहीं। यदि हमने बाजार से खोवा खरीदकर उसके रसगुल्ले, बरफी, पेड़ा, छैना आदि मिठाईयाँ बनती देखी हैं तो कोई खोवा को देखकर रसगुल्ले देखे, कोई पेड़ा, कोई बरफी तो सभी को सही कहना पड़ेगा किसी को भी गलत कहना उचित नहीं होगा। एक वस्तु में कई वस्तुयें बनने की क्षमता विद्यमान है, वस्तु को देखकर सभी क्षमताएँ जान लेना और मान लेना ही अनेकांत धर्म है और जिस पति ने, जिस तरीके ने उस अवस्था को सिद्ध किया है, उसे स्याद्वाद कहते हैं।

सवाल में सूत्रों को लगाना स्याद्वाद है और उत्तर हल होना अनेकांत है।

स्याद्वाद बात को सिद्ध करने का तरीका है- बात सिद्ध होना अनेकांत है।

मनुष्य में भूत-भविष्य-वर्तमान काल स्याद्वाद है और एक ही जीव में बालपन, युवापन तथा वृद्धपना होना अनेकांत है।

एक घड़ी की सुई का घूमना स्याद्वाद पति है लेकिन वही सुई 01 से 12 तक सभी पर घूमती है यह अनेकांत है।

एक जीव किस तरीके से कर्म करता है, यह स्याद्वाद है लेकिन जीव की अनेक अवस्थायें बनना अनेकांत है।

भोजन पेट में कैसे गया ये स्याद्वाद है, वही भोजन खून, पीव, रस, मज्जा, हड्डी, वीर्य, माँस से बना ये अनेकांत है।

हमने कर्म में राग-द्वेष या मोह किया ये स्याद्वाद है, इससे आठ या सात कर्म निर्मित हुए ये अनेकांत है।

हमने पानी से विद्युत बनाई यह तरीका स्याद्वाद है लेकिन वह विद्युत किस-किस रूप में अवतरित हुई यह अनेकांत है।

हमने खदान से कोयला निकाला यह स्याद्वाद है वह कोयला किस-किस रूप में बना ये अनेकांत है।

हमने पेड़ को लगाकर लकड़ी पैदा की ये स्याद्वाद है और लकड़ी के कई रूप स्वीकारना अनेकांत है।

धर्म को पाने के लिये संयमादि पाना स्याद्वाद है- धर्म को दश धर्म रूप समिति रूप, व्रत रूप कहना अनेकांत है।

गेहूँ से आटा बनवाना ये स्याद्वाद पति है लेकिन आटे में रोटी, पुआ, पराटे, पुड़ी, चीलडा आदि स्वीकार करना अनेकांत है।

पुत्र की प्राप्ति हेतु शादी करना स्याद्वाद पति है लेकिन पुत्र में कई उपमाएँ स्वीकार करना अनेकांत है।

वस्तु में कई छिपे हुए रूप जिस तरीके से प्रकट होते हैं वे तरीके ही स्याद्वाद पति कहलाते हैं लेकिन वस्तु में कई छिपे रूपों को सम्यक ढंग से समझना व स्वीकारना अनेकांत है।

यह स्याद्वाद और अनेकांतमयी धर्म का कथन केवल जैन दर्शन के सिद्धान्त में ही मिलता है, अन्य कहीं नहीं। जब तक अनेकान्त धर्म को सही ढंग से नहीं समझेंगे तब तक वस्तु को पूर्णरूपेण समझना नामुमकिन ही नहीं असंभव होगा। अनेकांत धर्म को स्याद्वाद पति से समझे बिना कोई भी धर्म का सही तरीके से उपदेश भी नहीं दे सकता। उपदेश वह नहीं जिसमें कथायें हों मनोरंजन हो। उपदेश वह है जिसमें अनेकांत धर्म की सिद्धि हो और वस्तु के वास्तविक तत्व का खुलासा हो। भगवान महावीर ने स्याद्वाद पति के सात भंग करके बताया क्योंकि आठवां तरीका कोई शेष नहीं बचता है, इन सात भंगों में सभी तरीके समाहित हो जाते हैं। इसीलिये ये सात ही हैं।

स्याद्वाद के सात भंग

स्यात्=अपेक्षाकृत, अस्ति=है, नास्ति=नहीं, अवक्तव्य= अकथनीय

1. स्यादस्ति - वस्तु है अपेक्षाकृत

2. स्याद्नास्ति - वस्तु नहीं है अपेक्षाकृत

3. स्यादस्ति-नास्ति - वस्तु है भी, नहीं भी है अपेक्षाकृत

4. स्यादवक्तव्य - वस्तु अकथनीय है अपेक्षाकृत

5. स्यादस्ति अवक्तव्य - वस्तु है पर अकथनीय है अपेक्षाकृत

6. स्याद्नास्ति अवक्तव्य - वस्तु नहीं है पर अकथनीय है अपेक्षाकृत

7. स्याद् अस्ति-नास्ति अवक्तव्य - वस्तु है पर अकथनीय भी हे, कथनीय भी है। अपेक्षाकृत

ऐसे महावीर भगवान का ऋण हम सभी किससे चुका सकेंगे जिनने दु:खों को मिटाने का अद्भुत ज्ञान दे दिया और हमें सम्मान से जीने का आधार दे दिया। इस ऋण को चुकाने का हमें एक ही तरीका समझ में आता है कि हम सभी ऐसे स्याद्वाद और अनेकांत के सिद्धांत को गहनता से समझें उसे आत्मसात् करके सभी को इसे समझाने का प्रयास करें। ये बात पूर्णत: सत्य है, स्याद्वाद और अनेकांत को जाने बिना हम न सम्यग्दर्शन को प्राप्त कर सकते हैं न सम्यग्ज्ञान व चारित्र को प्राप्त कर सकते हैं। धार्मिक क्रियायें होना अलग बात है लेकिन सम्यक्त्व पूर्वक धार्मिक क्रिया होना बिल्कुल ही अलग बात है।

अनेकांत धर्म को सिद्ध करने वाली वह स्याद्वाद पति का मतलब है विवाद से हटकर वाद पर पहुँचना, वस्तु का प्रतिपादन करना, जल्प करना, कथन की विवक्षा को ठीक-ठीक स्वीकार करना ही स्याद्वाद की सत्यता है। स्याद्वाद नहीं होता तो विवाद ही विवाद होता तथा अनेकांत धर्म का अता-पता नहीं होता सर्वत्र अपनी-अपनी ढपली अपना-अपना राज होता। अनेकांत धर्म हमें आधी सत्यता बता देता है लेकिन स्याद्वाद पति आधी सत्यता को पूर्णता तक ले जाती है, जैसे सामने आँखों से देखने पर भी हम वस्तु की पूर्णता को नहीं देख पाते, पूर्णता को

स्याद्वाद से अनेकांत की सिद्धि उदाहरण

शरीर में आत्मा भी है जो अदृश्य है, मन से अचिन्त्यनीय है, सोच-विचार के स्तर से ऊपर, ज्ञान दर्शन में लीन अवस्था वाली है और शरीर भी है जो मानव, देव, घोड़ा, गधा, शेर, नारकी आदि आकार है, हम वर्तमान में दोनों के मिश्रण रूप हैं इस मिश्रण रूप में सात भंग तैयार होते हैं, यदि मिश्रण रूप न माना जाय तो सात भंग बनने की कोई व्यवस्था नहीं है। वे इस तरह है:-

1. स्याद्अस्ति - कोई तुम्हें आत्मा कह दे तो आप क्या ये कहेंगे मैं आत्मा नहीं हूँ ? आपको कहना पड़ेगा हाँ मैं आत्मा हूँ यह अस्ति है, एक प्लास्टिक के पेन को कोई प्लास्टिक कहे तो कहना पड़ेगा हाँ। यही अस्ति है।

2. स्याद् नास्ति - कोई तुम्हें शरीर कह दे, आत्मा नहीं। तो आप क्या कहेंगे ? मैं शरीर नहीं हूँ तो शरीर किसका है ? तो कहना पड़ेगा मेरा है Passassive case, बिना Subject के नहीं बनता, Pronoun कभी Noun के बिना नहीं होता तो तुम शरीर हुए यह नास्ति है। प्लास्टिक को पेन कह दें, प्लास्टिक नहीं तो पेन कहना प्लास्टिक नहीं। यह नास्ति है।

3. स्याद् अस्ति - नास्ति-कोई आपको आत्मा कहे कोई आपको शरीर कहे तो आप किसकी सही मानेंगे - उत्तर है दोनों की। क्यों मानेंगे ? क्योंकि हमने अस्ति - नास्ति जान लिया है, कोई प्लास्टिक कहे कोई पेन कहे तो दोनों ही स्वीकारना स्याद् अस्ति-नास्ति है।

4. स्याद् अवक्तव्य - किसी ने आपसे न शरीर कहा न आत्मा कहा आपको देखता रहा ऐसी स्थिति में आप क्या होंगे ? शरीर या आत्मा ? कुछ नहीं होंगे। हम जो हैं वही रहेंगे यही स्याद् अवक्तव्य है, एक कुत्ता न तुम्हें आत्मा समझता न शरीर फिर भी तुम्हें कुछ समझता है ये स्याद् अवक्तव्य है, इसी तरह पेन जान लेना चाहिए।

5. स्याद् अस्ति अवक्तव्य - कोई तुम्हें आत्मा ही समझ रहा है, शरीर नहीं लेकिन फिर भी कुछ भी नहीं कह रहा है, ये स्याद् अस्ति अवक्तव्य है तुम कुत्ते को एक आत्मा समझ रहे हो पर उससे कुछ नहीं कह रहे हो तो यही स्याद् अस्ति अवक्तव्य है तुम पेन को प्लास्टिक समझ रहे हो फिर भी चुप हो यह स्याद् अस्ति अवक्तव्य है।

6. स्याद् नास्ति अवक्तव्य- कोई तुम्हें आत्मा नहीं समझ रहा है शरीर समझ रहा है, फिर भी कुछ नहीं कह रहा है, ये स्याद् नास्ति अवक्तत्य है कोई पेन प्लास्टिक को कह रहा है, प्लास्टिक नहीं समझ रहा है, यह स्याद् नास्ति अवक्तव्य है।

7. स्याद् अस्ति-नास्ति अवक्तव्य - कोई तुम्हें आत्मा भी समझ रहा है, तुम्हें शरीर भी समझ रहा है, दोनों समझते हुए भी कुछ नहीं कह रहा है, चुपचाप है यह अस्ति-नास्ति अवक्तव्य है कोई पेन भी समझता है, प्लास्टिक भी समझता है लेकिन फिर भी चुपचाप प्रयोग करता है कुछ कहता नहीं तो यही स्याद् अस्ति-नास्ति अवक्तव्य है।

वस्तु इस प्रकार है अस्ति, वस्तु इस तरह नहीं है नास्ति, वस्तु दोनों तरह की है अस्ति-नास्ति, वस्तु है पर दोनों में से कुछ भी ठोस कहने योग्य नहीं- अवक्तव्य, वस्तु है पर अकथनीय है- अस्ति अवक्तव्य, वस्तु नहीं है पर अकथनीय है नास्ति अवक्तव्य और वस्तु-है भी, नहीं भी है फिर भी अवक्तव्य है अस्ति-नास्ति अवक्तव्य है।

इन सात तरीकों से बाहर कोई कथन नहीं किया जा सकता है, यदि होता, तो भगवान महावीर वस्तु को पूर्णता से नहीं बता पाते। जैसे दुनियाँ कहने में सारे देश समाहित है भारत कहने में सारे राज्य समाहित है, राजस्थान कहने में सारे जिले समाहित हैं, जयपुर कहने में उस जिले के सारे गाँव समाहित हैं, ठीक वैसे ही स्याद्वाद पति के सात भंग कहने में सभी ढंग समाहित हैं, दुनियाँ में षड् दर्शन कहे जाते हैं, उसमें जैन दर्शन नहीं है, इसका कारण है बौद्ध, नैयायिक, मीमांसक चार्वाक आदि ये सभी दर्शन स्याद्वाद पति को न समझ पाने के कारण अनेकांत धर्म को सिद्ध नहीं कर सके और कोई एक भंग को पकड़ लिया जैसे मनुष्य को आत्मा ही स्वीकार किया शरीर नहीं, शरीर ही जाना, आत्मा नहीं अथवा दोनों का मिला रूप मनुष्य ही माना शरीर और आत्मा नहीं। जब ऐसा हुआ तो महावीर के सिद्धान्त में सातों भंग बताये गये हैं और अनेकांत धर्म भी प्रदर्शित किया गया है। जैन दर्शन इन सभी का न्यायाधीश बना। वह कोई एक भंग को ही नहीं मानता, सभी मानता है इसलिये जैन दर्शन न्यायाधीश (Justice) बनकर जजमेंट देने वाला हो गया।

दूध में पानी भी है, घी भी है और केसीन भी है, तीनों की मिली अवस्था दूध है, यदि एक भंग से देखेंगे तो हमें पानी दिखेगा दूसरे भंग से घी तीसरे भंग से दूध

दिखेगा यदि हम सारे भंग जान लेंगे तो हम दूध में से जो सारभूत-सार्वभौमिक सत्य तथ्य घी है, उसे प्राप्त करने में कामयाब होंगे अन्यथा दूध सड़ जायेगा घी बरबाद हो जायेगा। हमारी अज्ञानता के कारण असत्य को ही हम सत्य मानते रहेंगे।

हम अपने आपमें ही एक नजर डालकर देखें कि हम स्वयं ही सत्य जानने या पाने के इच्छुक हैं भी या नहीं। यदि हैं तो दिन में कितने समय और कब-कब इस पर विचार करते हैं ? यदि नहीं करते तो फिर तुम्हें अपने मन का ही सत्य महसूस होने लगेगा, फिर कभी कोई सत्य का पर्दाफाश करेगा तो तुम्हें बहुत कठिनता से स्वीकार होगा हम हमेशा ही सत्य के खोजी बनें।

जिस-जिस अकाट्य सत्य से आप परिचित होते जाएँगे वही आपका श्रद्धान बन जायेगा, जिस जिससे आप अपरिचित रहेंगे वह-वह आपका श्रद्धान नहीं विचार हो सकता है। यदि आप पानी में एक बार गिर जावें, जब डूबने लगें तो आपके हाथ-पाँव बचने के लिए उठेंगे जब बच जाओगे तब अंदर में अव्यक्त श्रद्धान यही होगा कि पानी में डूबने से मर जाते हैं, एक व्यक्ति रस्सी पर बिना अभ्यास के चला, थोड़ा चलने पर गिर गया अब वह रस्सी पर चढ़ने पर मना करता है, उसके भीतर श्रद्धान बन गया लेकिन यह गलत श्रद्धान था फिर कोई दूसरा व्यक्ति उसके सामने चढ़कर चलता है उसे साहस देता है तब वह समझता है ये मेरी गलत धारणा थी और सही श्रद्धान प्राप्त कर लेता है, वही अंतरंग श्रद्धान अव्यक्त होते हुए सारी क्रियाओं में अभिव्यक्त है, क्रिया को पकड़ना सरल है लेकिन श्रद्धान को पकड़ना कठिन है।

विवक्षा हमेशा कई धर्मो में एक धर्म पर ही लागू होती है। इसलिए कथन करने में अपेक्षा अवश्य होती है स्यात् की विवक्षा भावों में होती है, शब्दों में नहीं। मैं किसी एक व्यक्ति को चाचा-मामा-पिता- भाई-बेटा-पति कह रहा हूँ तो मैं अपेक्षा कह करके चाचा-मामा नहीं कहूँगा अपेक्षा अन्दर भावों में छिपी हुई है, शब्दों में चाचा-मामा कहूँगा। स्याद्वाद पद्धति और अनेकांत जाने बिना न महावीर को समझा जा सकता है, न महावीर की वाणी को, सत्य पाने की बात तो बहुत दूर है। श्रद्धान करने योग्य वह है जो सार्वभौमिक सत्य है तथा जो तर्क-न्याय और सिद्धांत की कसौटी पर खरा उतरा है।

श्रद्धान क्या है ?

श्रद्धान का नाम सुनकर मन स्वयमेव ही झुक सा नज़र आता है इसीलिए श्रद्धा धर्म में ही लागू होती है, जिसका नाम ही शरीर के अंग-अंग को रोमांचित कर देता है, जिसके शब्द से ऊर्जा का प्रवाह बाहर की ओर उद्‌घटि होने लगता है। **सृष्टि की हर रचना पर श्रद्धा की गंध समाई है, श्रद्धा के बिना कोई भी कार्य को प्रारम्भ करना और सफलता से करते हुए समाप्त कर लेना पूर्णतः असंभव है।** क्योंकि प्रत्येक कार्य में श्रद्धा की अभिव्यक्ति है, श्रद्धा कमजोर होने पर हमारे कार्य की गति कमजोर होती है, फिर सफलता भी असंभव सी प्रतीत होती है। ऐसी श्रद्धा को विचारों से मापना अथवा बाह्य क्रियाओं से या आचरण से मापना समुचित नहीं हो सकता। किसी हद तक विचार और व्यवहार से मापना तो उचित है लेकिन विचार और व्यवहार से बिल्कुल सही पता नहीं लगाया जा सकता है। अच्छे-अच्छे विचारक श्रद्धा का वास्तविक रूप समझने में समर्थ नहीं हो सके तो साधरण अल्पज्ञ आदमी की तो बात ही क्या ? चार लाइनें :-

जहाँ श्रद्धान ढीला हो तो ढीला ज्ञान हो जाता,
ज्ञान कमजोर होने पर ये चारित डगमगा जाता।
अगर श्रद्धान दृढ़ करना तो अनुभव से गुजर जाओ।
बिना अनुभव कदम अपना कभी दृढ़ हो नहीं पाता।।

सृष्टि की संरचना में एक तरफ पेड़ दिखाई देता है तो एक तरफ जमीन, कहीं आग-हवा कहीं जल, कहीं बिच्छु-मच्छर कहीं शेर- गधा, कहीं देव-मानव कहीं नारकी-ये सभी छद्धान का ही विस्तार है। कोई मनुष्य अवस्था को पाकर भी दुर्गति भ्रमण कर जाता है कोई मनुष्य से देव बनकर निर्वाण पा लेता है। यहाँ श्रद्धा की गतिमान है जिस श्रेणी (Quality) की श्रद्धा जिस मात्रा (Quantity) में विकसित (Expantion) होती है हमारा विस्तार उसी मात्रा में हो पाता है, पूर्ण श्रद्धा हमें पूर्णता की और अपूर्ण श्रद्धा हमें अपूर्णता का संकेत दे देती है। श्रद्धा को ही मनोविज्ञान में व्यक्तित्व (Personality) कहते हैं।

विचार और श्रद्धा में अन्तर

विचारों का कोई माप नहीं इसका कोई संतुलन नहीं विचार उच्छृंखल हैं। विचारों की श्रृंखला क्षण-क्षण में बदलती रहती है लेकिन श्रद्धा सब कुछ मापकर ही होती है, **श्रद्धा उच्छृंखल नहीं उत्कृष्ट होती है,** विचार कई किये जाते हैं, श्रद्धा नहीं। कई बार हम विचार कर लेते हैं कि हम क्रोध नहीं करेंगे लेकिन फिर भी वक्त आने पर क्रोध आ जाता है। कई बार हम सोच लेते हैं कि किसी के प्रति बुरी नज़र नहीं रखेंगे लेकिन हो जाती है। ये अंतरंग श्रद्धा और विचार का अंतर है, विचार अनगिनत हैं श्रद्धा अकेली है **विचार श्रद्धा युक्त भी हो सकता है और श्रद्धा रहित भी हो सकता है, श्रद्धा विचारपूर्वक ही होती है लेकिन विचार श्रद्धापूर्वक हो यह कोई जरूरी नहीं।**

श्रद्धा विचारों का अन्तिम परिणाम है, विचार परिस्थितियों वश, कर्मोदय वश, पूर्व संस्कार वश पैदा होते रहते हैं **एक बार जो श्रद्धा पैदा हो जाये फिर कई विचार मिलकर भी उसे तोड़ नहीं पाते** ये बात अलग है कि उसका माहौल बदल जाये या पाप का उदय आ जाये तो श्रद्धा छूट जाये लेकिन टूट नहीं पाती! इसे जरा समझिये :-

एक धार्मिक व्यक्ति छः कर्त्तव्यों को करता हुआ सच्चा श्रद्धान कर गया और सम्यग्दृष्टि हो गया एक-दो दिन या घंटे के बाद मिथ्यात्व का उदय आया या अनंतानुबंधी कषाय का उदय आया और वह श्रद्धान से गिर गया, यहाँ उसकी श्रद्धा छूटी है टूटी नहीं। भविष्य में वह अर्द्धपुद्गल परावर्तन काल के अंदर फिर कभी श्रद्धान को प्राप्त होकर सम्यग्दृष्टि होता हुआ निर्वाण को प्राप्त कर लेता है। जैसे आपने एक बार कॉफी पीकर देखी तत्पश्चात् कई वर्षों तक कॉफी नहीं मिली तो वह कॉफी पीने वाला कॉफी के स्वाद को भूला नहीं है, कॉफी मिलते ही वह तत्काल पूर्व स्वाद से परिचित हो जायेगा। एक व्यक्ति को पाँव में बाल तोड़ हो गया उसकी असहनीय पीड़ा को सहन करता हुआ एक दिन ठीक हो गया 5 वर्ष तक ठीक रहा एक दिन एक-दूसरे व्यक्ति को बाल तोड़ हुआ देखकर उसका वेदन उसने कर लिया। उसकी बालतोड़ की वेदना स्मृति समाप्त नहीं हुई, ठीक हो जाने पर उसकी वेदना समाप्त हुई थी। ठीक ऐसे ही श्रद्धा है। सच्चा अनुभव हो जाने पर वह माहौल बदलने पर छूट तो सकता है लेकिन टूट नहीं सकता।

श्रद्धा का स्पष्टीकरण एक उदाहरण से और स्पष्ट हो जायेगा एक, एक वर्ष का बालक अपनी माँ की गोद में खेल रहा है अचानक एक दीपक जलता हुआ देखता है, जिसमें अग्नि की लौ हिलती नाँचती सी प्रतीत हो रही है। बालक उस लौ को पकड़ने के लिए माँ की गोद से उतरकर उसकी ओर आगे बढ़ता है और माँ उसे पकड़ लेती है, बच्चे को पीड़ा के हाव-भाव करके बताती है कि बेटा उसको पकड़ोगे तो तत्ता (पीड़ा) हो जायेगी लेकिन बच्चा भाषा से अनभिज्ञ है वह नहीं जानता की माँ क्या कह रही है? और माँ की गोद से छिटककर फिर उस लौ की ओर पकड़ने को दौड़ता है, माँ फिर उसे अपनी ओर खींच लेती है। ऐसा क्रम कई बार चलता रहता है, **बालक का विचार लौ पकड़ने का है और श्रद्धा उसे पकड़ने में आनन्द की है।** पीड़ा से अनभिज्ञ है वह बालक, अचानक एक घटना घटती है माँ कुए से पानी भरने के लिए चली जाती है। घर में बालक अकेला है और सामने जलते हुए दीपक की लौ। अब बालक स्वतंत्र हुआ स्वछन्दता में उतर आता है और दौड़कर दीपक के पास पहुँच जाता है फिर देखता है कि कहीं माँ उसे देख तो नहीं रही है। सभी रोक-टोक के अभाव में बच्चा अपना काम करने में सफल हो जाता है और उस लौ को पकड़ लेता है, पकड़ते ही हाथ चहकता है और वह जोर-जोर से चिल्लाकर रोने लगता है। माँ को पुकारने लगता है माँ दौड़ कर आती है, बच्चे को गोद में उठाती है और सहलाने लगती है, बार-बार कहती है हमने मना किया था कि उसके पास मत जाओ लेकिन नहीं माना अब पता चल गया, जब जल गया। थोड़ी देर बाद माँ ने बालक को सहलाया बालक चुप हो गया अब श्रद्धा की घटना सामने आयी। माँ फिर से चली गयी पानी भरने, अब घर में फिर बालक अकेला है और सामने दीपक जल रहा है बालक दूर से ही देख रहा लेकिन पकड़ नहीं रहा है। माँ कह रही है बेटा पकड़ ले उस लौ को अब वह कहने पर भी नहीं पकड़ रहा है। उसे बड़े-बड़े विद्वानों ने समझाया माँ ने पिता ने समझाया फिर भी वह उसे पकड़ने को राजी नहीं हुआ अब वह विचार श्रद्धा बन चुका है। **''श्रद्धा के आगे हजार-हजार विचार भी कार्य कराने में सक्षम नहीं हो पाते श्रद्धा सूरज है तो विचार उसकी एक किरण है।''**

बालक के सामने उसके पिता ने माँ ने भय निकालने के लिये उस अग्नि की लौ को झुटमुट तरीके से पकड़कर उसे पकड़ने को कहा, बालक तब भी उसे पकड़ने को तैयार नहीं हो पाया वह तब से पूरी 80 वर्ष की ज़िन्दगी तक इसे भूल नहीं सका **श्रद्धान वह है जिसे कभी भी न भूला जा सके विचार वह है जो भूलते ही**

रहते हों।

वास्तविक श्रद्धान बाहर के विचारों से नहीं अन्तस् की अनुभूतियों से प्रकट होता है। श्रद्धा को जीवन में पैदा करने के लिये हमें अपने वास्तविक स्वरूप से पूर्णरूप से परिचित होना पड़ता है, शुद्ध तत्व वाले वह परमात्मा को शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय की दृष्टि से सभी नयों से समझना पड़ता है तब कहीं श्रद्धान बनता है सारा विश्व मूलभूत दो द्रव्यों से निर्मित है, जीव और अजीव। अजीव के 5 भेद हो जाने से छः द्रव्यों की सत्ता को वास्तविक व अवास्तविक तरीकों से नय और प्रमाण के रूप से स्वीकार करना पड़ता है। नव पदार्थों की सत्ता और इसका स्वरूप जानना पड़ता है, इन सभी को जानने के बाद स्वयं की सत्ता की शुद्धता व अशुद्धता को जानकर ज्ञानोपयोगी बनना पड़ता है तब कहीं जाकर सच्चे श्रद्धान की भनक जीवन में पैदा होती है।

श्रद्धा से रहित प्राणी ढूँढ़ना असंभव है एक नीच से नीच निगोदिया जीव और उच्च से उच्च परमात्मा भी श्रद्धा से रहित नहीं है, श्रद्धा दो रूपों में रहती है- गलत और सही- स**ही श्रद्धा सही को भी जानती है और गलत के स्वरूप को भी जानती है, गलत श्रद्धा गलत को ही सही मानती है और सही रूप को नहीं मानती है।** जब-जब हमारे मन-वचन-काय की प्रवृत्ति गलत को अपना मानने की होती है तब-तब हम गलत श्रद्धा से युक्त होते हैं और जब-जब सही-सही योग की प्रवृत्ति चलती है। तब-तब हम सही श्रद्धा से सहित होते हैं।

श्रद्धा ही भव का नशा देती है, श्रद्धा ही भव को नशा देती है।
सही और गलत के ही फेर हैं यारो, श्रद्धा ही रुला-हँसा देती है।।

पंचम काल में सभी की जन्म लेते समय गलत श्रद्धा होती है, गलत में जीने के कारण आदमी संसार की भौतिकता की चकाचौंध में अपनी वास्तविकता भूल जाता है, यद्यपि अभी तक वह वास्तविकता से परिचित ही नहीं हुआ तो भूलना कहनाउचित नहीं है। गलत श्रद्धा इतनी जबरदस्त है कि कोई ज्ञानी दिगम्बर संत संसार का सही चित्रण भी सामने रखते हैं तब भी उसे विश्वास नहीं होता है, साधु सबकुछ त्याग कर निर्विकार अवस्था में सामने खड़े हो जाते हैं तब भी उसे ये सब झूंठा प्रतीत होता है और स्वयं जिसमें दुखी रहता हुआ जी रहा है, वह सच्चा प्रतीत होता है। गहनता से सही जानने का प्रयास किया जाये तो यह गलत श्रद्धा का ही एक

अभिव्यक्त रूप है।

कई लोग यह कहते हैं कि हम जानते हैं कि सही मार्ग तो दिगम्बर वीतराग पथ ही है संसार तो मकड़ी का जाल है जिससे कोरा भ्रम पैदा होता है। ऐसा कहकर लोग घरद्वार छोड़ नहीं पाते और उसी में फँसे रहते हैं ये सभी उनके विचार होते हैं जो क्षण-क्षण में बदलते रहते हैं श्रद्धान गलत है और विचार सही होने लगता है। **''गलत श्रद्धान में सही विचार हो सकते हैं लेकिन सही श्रद्धान में गलत अभिप्रायः नहीं हो सकते।''**

श्रद्धान सही होने पर भी सामने होने वाली क्रिया गलत हो सकती है लेकिन भाव और उसके भीतर छिपा अभिप्रायः वाला विचार गलत नहीं हो सकता श्री रामचन्द्रजी ने सीता के हरण होने पर रावाण से लड़ाई लड़ी और हजारों लोगों को मौत के घाट उतार दिया फिर भी उनका श्रद्धान गलत नहीं हुआ और रावण ने भी कई लोगों को मारा लेकिन उसका श्रद्धान गलत हो गया। **रामचन्द्रजी की न्याय नीति की लड़ाई थी ओर रावण की अन्याय अनीति की लड़ाई थी। श्रद्धान सही हो तो न्याय नीति पूर्वक कार्य होगा और गलत श्रद्धान में अन्याय अनीति का अभिप्रायः होगा।**

कई लोग ऐसा कहते हैं कि महाराज यदि आपका सान्निध्य हमें पूर्व में मिल जाता तो हम अवश्य ही धर्म के मार्ग पर निकल आते इस संसार में नहीं फँसते। ध्यान रहे, यहाँ श्रद्धान तो कमजोर बैठा हुआ है और व्यक्ति अपने आपको श्रद्धानी सिद्ध करना चाहता है। यदि श्रद्धान मजबूत होता तो नेमिनाथ की तरह बारात में से वैरागी बनकर आ जाते और श्रद्धान गलत है, तो फिर सारा सोच धर्म की ओर नहीं होता। विडम्बना यह है कि- ऐसा व्यक्ति स्वयं तो गलत है लेकिन स्वयं को गलत अभी भी नहीं समझ रहा है, पूर्व में भी गलत नहीं समझा और अभी भी नहीं समझता है।

हमारी सारी गमनागमन की गति श्रद्धान के पहियों पर होती है पर वस्तुओं में आनन्द वही मनाता है, जो परिग्रहानंद होता है। परिग्रहानंद ही मूर्खानंद होता है। **मूर्ख होना इतना खराब नहीं जितना मूर्खानंद होना खराब है।** मूर्ख जल्दी ज्ञानी हो जाता है, मूर्खानंद ज्ञानी नहीं हो पाता। मूर्ख और मूढ में बहुत अंतर प्रतीत होता है।

मूर्ख व मूढ में अन्तर

मूर्ख और मूढ दोनों ही गलत श्रद्धान की शाखाएँ हैं दोनों ही मिथ्यात्व की पर्यायें हैं। बस Quality में थोड़ा सा अन्तर है। एक वह व्यक्ति है जो पूजा करता हे, स्वाध्याय करता है, नियमादि का पालन करता है, अपने आपको बहुत बड़ा विद्वान समझता है, कहीं तेरा पंथ को पक्ष करता है, कहीं बीस पंथ को पक्ष करता है, कहीं किसी संत का पक्ष करता है कहीं किसी संत का, कहीं महावीर स्वामी को श्रेष्ठ बताता है, कहीं पार्श्वनाथ भगवान को, कहीं अपने पक्ष की सिद्धि करने के लिए प्राचीन आचार्यों को भी गलत बता देता है। इसे देव-शास्त्र-गुरु पर श्रद्धान तो है ही नहीं और अपने आपको श्रेष्ठ समझता है। ये Deeply fool गहरे मूर्ख होने से इन्हें ही आगम भाषा में मूढ कहते हैं और जो अज्ञानी हैं, अनपढ़ हैं, किसी की देखादेखी करते हुए धर्म करता है, अपना विवेक सदुपयोग नहीं करता, कोई जैसा कहता है वैसा ही करने लगता है, वैसा ही समझने लगता है, ऐसा व्यक्ति मूर्ख है। मूर्ख को समझाने पर समझ जायेगा, वह सही राह पर आ जायेगा। मूढ को समझाने पर कुपित हो जायेगा। वह दूसरों को भी गलत राह पर ले जायेगा।

भूले व भोले में अन्तर

दुनियाँ में दो तरह के लोग पाए जाते हैं, एक वे जो अज्ञानी हैं, शास्त्रों की बातों से अनभिज्ञ हैं और रागद्वेष में लिप्त हैं लेकिन अहंकारी नहीं हैं। एक वे लोग हैं जो तथाकथित ज्ञानी हैं, लोगों की नजर में ज्ञानी हैं, शास्त्रों की बातों को जानते हैं और लच्छेदार बातें दूसरों को सुनाते हैं और राग-द्वेष विषय कषायों में लिप्त हैं, अहंकार तो उनकी नाक पर रखा रहता है। **जो अनभिज्ञ होकर अहंकारी नहीं ये लोग भोले हैं, समय आने पर जरा से सम्बोधन से ऐसे लोग धर्म-मार्ग पर लगकर अपना कल्याण कर लेंगे। लेकिन पढे-लिखे रागी-द्वेषी-परिग्रही भोगी लोग भूल जाते हैं, इन्हें उपदेश देकर समझाया भी नहीं जा सकता क्योंकि वे खुद दूसरों को उपदेश देते हैं।** इन्हें समझाओगे तो अहंकार इनकी नाक से और मुँह से टपक पड़ेगा। ऐसे तथाकथित ज्ञानियों ने ही धर्म को बदनाम कर दिया है।

श्रद्धान की विशेषताएँ

श्रद्धान एक ऐसी चीज है जो हमारे समस्त प्रदेशों की अभिव्यक्ति है, जिसका वेदन हमारा रोयाँ-रोयाँ गहनता से कर लेता है। वही हमारा श्रद्धान बन पाता है। यदि हमने स्वादिष्ट वस्तु का स्वाद लेते समय बहुत ही पुलकित अवस्था बनाई तो स्वादिष्ट वस्तु हमारे आनंद का कारण बनेगी। हम उसे ही सुख का हेतु मान लेंगे, फिर हमारी जिंदगी उसी वस्तु को पाने के लिए लाख प्रयत्न करेगी। हम हर संभव उसकी प्राप्ति करेंगे, उसको पाना हमारा लक्ष्य होगा, उसका आनंद हमारा श्रद्धान होगा। ऐसे समय में कोई निर्ग्रन्थ वीतरागी साधु भेजन में अनासक्ति का उपदेश दे रहा हो और स्वाद लम्पटी उस व्यक्ति का पुण्य का उदय हो, कषायों की मंदता हो, वास्तविकता जानने के लिए तीव्र उत्सुक हो तथा सामने बैठा हो तो वह उपदेश उस व्यक्ति पर भगवान की दिव्यवाणी की तरह तीर जैसा कार्यकारी हो जाता है। उसका सारा वस्तु में आनंद का श्रद्धान बदल जाता है, वह अपने स्वभाव को समझकर अपने वास्तविक आनंद के प्रति जागृत हो जाता है, उसका रोयाँ-रोयाँ स्वादिष्ट वस्तु के आनंद को गलत श्रद्धान, झूठा आनंद, पराधीन सुख, सुखाभाष घोषित कर देता है तब कहीं सही श्रद्धान का उद्‌गम होता है।

श्रद्धान जीवन के लिए हीलियम गैस का काम करती है। एक गुब्बारे में यदि हीलियम गैस भर दी जाये तो गुब्बारा ऊपर की ओर उठता चला जाता है। उसी गुब्बारे में यदि कार्बन-डाई-ऑक्साईड गैस भर दी जावे तो वह गुब्बारा नीचे की ओर गिरता चला जाता है। सच्ची श्रद्धा जब हमारे अंदर हो जाती है तब हम ऊपर की ओर उठने लगते हैं लेकिन गलत श्रद्धान (मिथ्यात्व) हमारे अंदर होता है, तब हम दुर्गति में तथा नीचे की ओर गिरने लगते हैं। **हर क्रिया, हर व्यवहार, हर आचरण की आधारशिला श्रद्धान ही है। श्रद्धा ऑक्सीजन गैस है, ऑक्सीजन गैस के बिना प्राणी का जीवित रहना असंभव है।** ऑक्सीजन के अभाव में प्राणी का मरण अवश्यंभावी है। **श्रद्धा रीढ की हड्डी की तरह है,** रीढ की हड्डी के अभाव में प्राणी न तो बैठ सकता है, न उठ सकता हे, न चल सकता है, न ही कोई कार्य कर सकता है। सारा शरीर रीढ की हड्डी पर ही टिका हुआ है।

श्रद्धा चश्मे के लेंस की तरह है। दुनियाँ में अच्छी वस्तुएँ भी रंगीन और खराब दिख सकती है और खराब अच्छी दिख सकती है। चश्मे का लेंस श्रद्धा जैसा है, हमारी श्रद्धा गलत हो तो हमें सही भी गलत दिखाई देता है और सही हो तो गलत भी

सही सा प्रतीत होता है। श्रद्धा गलत हो तो निर्ग्रन्थ साधु को भी गलत समझ लेते हैं और सही हो तो एक धार्मिक श्रावक को भी साधु जैसा समझ लेते हैं।

एक बार एक किसान पशुओं के डाक्टर के पास अपनी भैंस के बारे में पूछने गया कि हमारी भैंस भुस नहीं खाती, हरी-हरी घास खा लेती है। क्षेत्र में सूखा पड़ गया है, हरी घास अब उपलब्ध नहीं है, क्या करें ? डाक्टर ने कहा तू एक काम कर एक हरे रंग के ग्लास वाला चश्मा ले आ। जब भैंस को भुस डालने जाना तो पहले भैंस को यह चश्मा पहिना देना, फिर देखना कि भैंस उस भुसे को घास समझकर जल्दी-जल्दी खायेगी क्योंकि उसे वह भूसा घास नजर आयेगा। पता नहीं उस किसान ने जाकर क्या किया।

श्रद्धा रेल के इंजन के समान है। रेल का इंजन इतना दमदार होता है, इतनी शक्ति शायद ही किसी वाहन में हो। एक-एक किलोमीटर की रेल, सौ-सौ डिब्बे, एक-एक डिब्बे में सैंकड़ों-हजारों टन वजन, फिर भी अकेला इंजन खींच लेता है। इंजन सारे डिब्बों को जिधर मोड़ता चाहे, जहाँ रोकना चाहे और जहाँ ले जाना चाहे ले जाता है। ठीक वैसे ही श्रद्धा है, जीव को जहाँ ले जाना चाहे, जहाँ रोकना चाहे, जहाँ मोड़ना चाहे वहीं ले जाती है। **सारे जीवन में प्रत्येक कार्य के प्रथम कदम पर श्रद्धा की ही मुहर लगी होती है।**

श्रद्धावान व्यक्ति इन्द्रिय विषयों में विरक्त हो भी और न भी हो, त्रस हिंसा में विरक्त भी हो और न भी हो, लेकिन सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के श्रद्धान करने में उनकी आज्ञा मानने में हृदय से तत्पर होता है। श्रद्धावान व्यक्ति यदि ज्ञानहीन होने के कारण गुरु की गलत बात पर (जो आगमानुसार नहीं थी) श्रद्धान कर लेता है, तब भी वह गलत श्रद्धानी नहीं होता। क्योकि उसकी नजर में तो गुरु सही हैं और वह गुरु के प्रति अत्यन्त विनम्र है और ''विनम्रता में ही सम्यक्त्व निवास करता है, अहंकार में नहीं।'' **यदि कोई श्रद्धावान व्यक्ति किसी निर्ग्रन्थ गुरु की किसी गलत बात पर भी अज्ञानतावश श्रद्धान कर लेता है, पश्चात् कोई ज्ञानी मुनि उस गलत बात का निवारण करते हुए शास्त्र का प्रमाण दिखाता है, फिर यदि वह व्यक्ति नहीं मानता है तो उसी समय से उसकी श्रद्धा गलत श्रद्धान से युक्त हो जाती है।** श्रद्धा फूल की खुशबू जैसी है जो सारे बाग को महकाती है, प्रत्येक दर्शक को अपनी ओर लुभाती है। **श्रद्धा की खुशबू जीवन के बाग को फूलों से और खुश्बू से भर देती है।** श्रद्धा सब्जी में नमक की तरह है, नमक के बिना बनी सब्जी घास की तरह है, स्वादिष्ट नहीं।

श्रद्धान और विश्वास में अन्तर

श्रद्धान और विश्वास दोनों में उतना ही अंतर है जितना अपनी वस्तु को अपना मानना और पराई वस्तु को अपना मानने में अंतर है। विश्वास एक-दूसरे को मानने में चलता श्रद्धान स्वयं को मानने में चलता है। विश्वास में हम दूसरे के कंधे पर सवार होते हैं। श्रद्धान में सबकुछ हमारे द्वारा ही स्वीकार किया गया भाव होता है। विश्वास चश्मे से देखा गया दृश्य है। श्रद्धान अपनी आँख व अपनी ज्योति की शक्ति से देखा गया दृश्य। विश्वास करने में दो या दो से अधिक व्यक्तियों की रूरत है, श्रद्धान अकेले में होता है। विश्वास तोड़ने के लिए हमें दूसरों को छोड़ना पड़ेगा, श्रद्धान तोड़ने के लिए हमें खुद को तोड़ना और मरोड़ना पड़ेगा।

एक उदाहरण- व्यक्ति को शादी होती है तो लड़के व लड़की दोनों एक-दूसरे के घर से, व्यवहार से, विचार से अपरिचित होते हैं। मंडप पर जब दोनों को कसम दिलाई जाती है कि एक-दूसरे को आपस में निभाकर चलेंगे तब दोनों लोग एक-दूसरे को सबको सामने साक्षी बनाकर विश्वास दिलाते हैं और इस विश्वास पर वह लड़की अपना घर-द्वार, माता-पिता सब छोड़कर आ जाती है। इसमें सही श्रद्धान की कोई बात नहीं। ये सही है कि श्रद्धान के बिना विश्वास होता नहीं है। विश्वास को कभी भी विपरीत दशा में तोड़ा जा सकता है। लड़ाई होने पर सारे वायदे टूट जाते हैं, तलाक हो जाते है। ये विश्वास है **श्रद्धान हमारी कषाय के कारण छूट जाता है लेकिन टूटना संभव नहीं हैं क्योंकि श्रद्धान बहुत गहन अनुभव से प्राप्त होता है।** इसलिए उसका हमेशा के लिए भूलना असंभव है। घर, दुकान, पत्नि, बच्चे इन्हें भूला जा सकता है अथवा भूलते ही हैं। विश्वास में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कहता है मेरे पर या मेरा विश्वास करो। श्रद्धान में आत्मा अंदर से बोलती है और वेदन करती है। **विश्वास पर सारा संसार एवं व्यापार चल रहा है। श्रद्धान पर मंदिर, भगवान और धर्म चल रहा है,** ग्राहक दुकानदार से माल लेता है, विश्वास पर और दुकानदार ग्राहक को माल उधार दे देता है, विश्वास पर। बेटे को बाप पर, बाप को बेटे पर, भाई को बहिन पर, बहिन को भाई पर, पति को पत्नि पर, पत्नि को पति पर, मालिक को नौकर पर, नौकर को मालिक पर, विश्वास है, **गुरु को शिष्य पर, शिष्य को गुरु पर, साधु को श्रावक पर** (आहार करते समय) **श्रावक को साधु पर** (उपदेश के समय) **विश्वास है। विश्वास में पराधीनता है, श्रद्धान में स्वाधीनता, विश्वास में पराये को जोड़ना है, श्रद्धान में पराये को छोड़ना है और स्वयं को जोड़ना है।**

विश्वास धर्मी और अधर्मी दोनों करते हैं पर श्रद्धान करने वाला धर्मी ही होगा। विश्वास प्रशंसनीय नहीं है, श्रद्धान हमेशा प्रशंसनीय है। विश्वास कर्म के परिसर में घूमता रहता है। श्रद्धान धर्म के परिसर में घूमता है। विश्वास में लालसा पाने की है। श्रद्धान में लालसा हो जाने की है, विश्वास में नजर जमाने पर है, श्रद्धान में नजर खज़ाने पर है। विश्वास से पाप-पुण्य का गुड़ उपजात है, श्रद्धान से सत्य के गुण उपजते हैं।

हमारें अंतरंग भावों से श्रद्धान फूटता है और बाहर के व्यवहार में विश्वास फटता है। विश्वासी सत्य पर श्रद्धान करे यह जरूरी नहीं लेकिन **सही श्रद्धानी सत्य पर विश्वास करेगा।**

एक विश्वास करने वाला भोगी एक सच्चे साधु को झूंठा समझ सकता है लेकिन एक सच्चा श्रद्धानी गलत साधु को भी सच्च समझ सकता है। **श्रद्धान से हमारा उत्थान अवश्यंभावी है।** विश्वास से हो भी और न भी हो।

पक्षपात और श्रद्धान

पक्षपात शब्द से सिद्ध है पक्ष और पात, **जिसकी तरफ मुख करने से नीचे की ओर गिरें वह पक्षपात है** और जिसकी तरफ देखने पर ऊपर उठने लगें वह श्रद्धान होता है। सत्य का पक्ष लेना बुरा नहीं है। इसलिए पक्षपात शब्द अच्छी बातों में नहीं लगता, धर्म की बातों में नहीं लगता, अधर्म, कषाय, राग-द्वेष, मिथ्यात्व की बातों में लगता है। **सत्य का पक्ष ज्ञानी करता है, संत करता है पक्षपात अज्ञानी दुर्जन करता है।**

पक्षपात करने का मतलब है, हमारी मूर्खता हमसे ही प्रकट हुई और धर्म का पक्ष करने के लिए हमारी उच्चता धार्मिकता हमसे उद्घटित हुई। कषायी पक्षपात करते हैं और कर्तव्यशील श्रद्धान में उतरते हैं, **कमठ पक्षपात करते हैं,** कर्मठ पक्ष रखते हैं। पक्षपात में श्रद्धान को कभी भी विजय हासिल नहीं होती। पक्षपात हमेशा गलत की सिद्धि पर रहता है।

यदि हमारे अंदर वीतराग धर्म में तेरापंथ का पक्ष है तो हम बीसपंथ को गलत कहने लगेंगे, कोई ज्ञानी-ध्यानी संत को भी हम स्वीकार नहीं करेंगे और लड़ने को तैयार हो जायेंगे।

सत्यता यह है कि पंथ, पंडितों के झगड़ों की, अतिरिक्त बुद्धि की या समय के

माहौल की अवस्थायें हैं। ये पंथ संतों ने नहीं पंडितों ने बनाये हैं और मुक्ति पंथ संतों ने बनाये हैं। **संत हमें जो भी देगा वो सत्य होगा। पंडित हमें संत की बात में पक्षपात चुपड़कर देगा।** महान आचार्यो ने दोनों तरीकों से पूजन आराधना स्वीकार करने की कही है। उन आचार्यों के सामने हम किस खेत की मूली हैं। **तुम मूली क्या मामूली भी नहीं हो उनके सामने।**

माहौल पर पक्ष तैयार होता है और जो वास्तविक धर्म है, अकाट्य सत्य है, उस पर श्रद्धान होता है माहौल अकाट्य सत्य को पाने के लिए होता है। हमारी अनादि से शरीरों की पर्याय बदल रही है। आज जैन कुल में जन्मे हो, कल मुस्लिम कुल में पश्चात् अन्य कुल में जन्मोंगे वहाँ पर जो माहौल मिलेगा, वह हमारे अंदर पक्ष निर्मित करता है(लेकिन धर्म तो सार्वभौमिक सत्य (Authentic) पर श्रद्धान करना होगा। हम चाहे किसी सम्प्रदाय में हों जो अकाट्य सत्य है, उसे सभी स्वीकारते हैं वही सबका धर्म है। ये बात अलग है कि सभी ने अपने-अपने तरीके बनाए। ये भी बात अलग है कि हम सत्य को उपलब्ध हो पायें या नहीं हो पायें।

हठाग्रह और श्रद्धान

गलत धारणा हमेशा गलत की पुष्टि करने की उधेड़बुन में लगी रहती है, यही उधेड़बुन पक्षपात बन जाती है। जब कभी पक्षपाती ताकतवर हो जाता है अथवा पक्षपाती का बहुमत हो जाता है तो फिर हठाग्रह (दुराग्रह) पैदा हो जाता, फिर श्रद्धान की कोई बात नहीं रह जाती है। जैसे कोई कहे हमारे यहाँ पर आलू-प्याज को भक्ष मानते हैं। एक संत कह रहा है कि ये गलत है तो हम संत को भी गलत कह उठते हैं। **कभी-कभी अपने हठाग्रह के आगे कई लोग एक निस्पृही वीतरागी संत को भी झुकाने की सोचते हैं।** ये हठाग्रह ही नहीं दुराग्रह है। श्रद्धान होने पर हम खुद ही संत के चरणों में झुक जाते हैं।

एक जगह की बात है, मैं वर्षायोग कर रहा था। एक-दो लोग मेरे पास आये बोले कि हम मुनियों को मंदिर में स्थित भगवान की प्रतिमा को छूने नहीं

देते, हमने कहा क्यों ? बोले मुनि स्नान नहीं करते, शौच जाते हैं तो शुद्धि ढंग से नहीं करते। हमने कहा फिर शुद्धता से आहार क्यों देते हैं ? और ये तो बताओ कि प्रतिमा को सूरिमंत्र देकर भगवान किसने बनाया ? मुनिराज ने या तुम्हारे पुरखों ने। जब सारे जवाब पस्त हो गये तो वह हठाग्रह पर उतर आया बोला ये हमारे यहाँ की परम्परा है। परम्परा वह है जिसका उल्लेख आगम में नहीं होता है। किसी की सोच से परंपरा चलती है और हृदय के सोच से श्रद्धान चलता है। हमने कहा हम भगवान को छू लें तो परम्परा टूट जायेगी। वह बोला हम मंदिर में ताले लगवा देंगे, यह उसका दुराग्रह है। मानतुंग मुनि की आराधना से 48 ताले खुले यह श्रद्धान था लेकिन जब हठाग्रह होता है तो हम बेदी में मुनियों की वजह से ताले भी लगा देते हैं।

पंथ और श्रद्धान

श्रद्धान हंस की तरह है जो सार प्राप्त कर लेता है, पानी छोड़ देता है। पंथ वह है जो पानी को ही दूध समझ लेता है। हंस के मुँह में एक ऐसा एसिड होता है जो दूध को मुँह में रखते ही फाड़ देता है, जिससे दूध का सार मुँह में रह जाता है। हम सभी के मुँह में यह व्यवस्था नहीं है। **श्रद्धान वह है जो सर्वव्यापी है, जो बात सभी जगह स्वीकार की जाती है और वैसे ही स्वीकार की जाती है, जैसा उसका वास्तविक स्वरूप है और पंथ वह है जो कुछ जगह स्वीकार होता है,** कुछ जगह अस्वीकार होता है। देश की प्रगति करना, उसकी रक्षा करना, उसका संचालन करना श्रद्धान है लेकिन भाजपा-काँग्रेस पार्टी में पहुँचकर अपनी-अपनी पार्टी का भला चाहना पंथवाद है। आज के अनुसार श्रद्धान वह अंग्रेजी भाषा है जो सब जगह मान्य है। हिन्दी, उर्दू, मलयालम ये पंथवाद का प्रतीक है। एक नजर में हम यह समझ लें कि पंथ की उत्पत्ति कैसे हुई ? किसने की ? क्यों हुई ? कब तक चलेगी ? आदि तथ्यों पर विचार कर लें तो धर्म की वास्तविकता पकड़ में आ जायेगी।

तेरा पंथ व बीस पंथ क्या है?

भारत में एक ऐसा समय आया जब जैन ग्रंथों की होली जल रही थी। देश का सम्राट प्राचीन ग्रन्थों को ईर्ष्या, कषायवश जला रहा था। सम्राट धर्म की सत्यता की शक्ति की परीक्षा लेना चाहता था। तभी कुछ विद्वान लोगें ने एक मीटिंग की और उसमें यह फैसला किया कि क्यों न हम लोग ब्रह्चर्य व्रत धारण करके मंत्र की सिद्धि करें और अपने धर्म की रक्षा करें। उस समय दिगम्बर मुनि इस देश में नहीं थे और चंद धार्मिक लोग सम्राट से लोहा नहीं ले सकते थे। ऐसी अवस्था में ऐसे धार्मिक लोगों ने आगम के अनुसार महान आचार्यो की किसी भी बात का उल्लंघन न करते हुए जैसा लिखा था शास्त्रों में वैसा करते हुए भगवान की पूजन की उसमें उन्हीं द्रव्यों का प्रयोग किया गया जो शास्त्र में लिखा था। उस साधना-आराधना और उत्कृष्ट भावना के बल पर उन्हें मंत्र सिद्धियाँ हुई फिर उन्होंने सभी राजाओं को काबू में करने के लिये धर्म की रक्षा को लेकर मंत्र सिद्धियाँ बताई और अपना गढ़ बनाया। उस समय वह गढ़ बीस जगहों पर था। दिल्ली, ग्वालियर, जयपुर आदि बीस गद्दी बनाई गई, वहाँ की परम्परा से पूजन विधि में फूल-फल आदि द्रव्यों का अवलम्बन किया गया ये बीस पंथी कहलाने लगे।

इन भट्टारकों की गद्दी पर बाल ब्रह्म्चारी ही बैठते थे। मेरे गृहस्थ अवस्था के चाचाजी को भी ग्वालियर की गद्दी पर बैठने के लिये बुलाया गया था लेकिन मेरे चाचाजी शादी के इच्छुक थे, इसलिए दादाजी ने मना कर दिया था।

तेरा पंथ का जन्म पंडित टोडरमलजी के द्वारा हुआ। टोडरमल जब वीतरागी प्रतिमा के सामने चिंतन, मंथन, पूजन करने के लिए बैठते थे तो उनकी धारणा के अनुसार वो भगवान से कहते थे हे भगवन् ! जो तेरा पंथ है वही मेरा पंथ है, जो तेरा रास्ता है वही मेरा रास्ता है (पंथ शब्द पथ से बना हुआ) जो तेरा पथ है सो मेरा पथ है। यहाँ से तेरापंथ निर्मित हुआ। लेकिन अज्ञानियों ने उसे तेरह पंथ बना दिया।

पूर्व में मंदिरों के बाहर चारों ओर एक बाग का निर्माण होता था, जिससे फूलों की प्राप्ति में असुविधा न हो। वर्तमान में ये बाग मिटते गये, जगह का अभाव होता गया तब आचार्य श्री उमास्वामी महाराज ने श्रावकाचार में श्रावकों को दोनों विधियों का उल्लेख किया और लिखा यदि फूल उपलब्ध नहीं हो सकें तो चावलों को

केशर से रंग लें और हरे फल न मिलें तो बादाम, किशमिश, इलायची आदि चढाकर पूजा करें। जिसको जैसी सुविधा हो, जिसको जिसमें उचित व अच्छा लगे वह चित्त की स्थिति को निर्मल बनाने के लिए करे। इसमें विवाद को कहीं भी स्थान नहीं था लेकिन कुछ पंडितों ने विानों और समाज के ठेकेदारों ने इसमें अपने अहंकार और पक्ष को सिद्ध करने के लिए ग्रुप बना लिए फिर एक-दूसरे से नारकियों की तरह विवाद करने लगे। दोनों अपने आपको अच्छा बताने में लग गये। अपनी-अपनी कषायों की पुष्टि में लग गये और भोली-भाली कम ज्ञानी समाज इन लोगों के पीछे लग गई जैसे भाजपा-कांग्रेस। इस पक्ष व अहंकार का विष सब जगह देखने को मिलता है, कोई विरला ही सच्चा धर्मी होता है जो सत्यता को जानकर दोनों को अपनी-अपनी जगह सही समझता है।

एक बच्चा जंजीर को गलवाकर उस सोने से एक दीपक बनवाना चाहता है लेकिन बच्ची जंजीर से अंगूठी बनवाना चाहती है। दोनों लड़ रहे हैं लेकिन पिता विवेकी है। वह जानता है हमारा सोना तो दोनों तरफ सुरक्षित है। वैसे ही आराधना कैसे भी करो हमारा श्रद्धान तो दृढ़ है।

एक पिता के तीन लड़के थे। बड़े होने पर उनमें से एक बंगाल रहने लगा, एक अजमेर रहने लगा, एक बुंदेलखण्ड रहने लगा। एक दिन त्यौंहार पर तीनों लड़के अपने पिता के घर आये, पिता ने पूछा कि तुम लोग भोजन में क्या लोगे ? तो बंगाल वाले लड़के ने चांवल खाना चाहे, अजमेर वाले ने बाटी-चूरमा खाने चाहे और बुंदेलखण्ड वाले ने दाल-रोटी खाना चाही। सभी के भोजन की पति अलग-अलग थी लेकिन इन सभी का भाव पेट की भूख को मिटाना ही था। भूख मिटाना श्रद्धान था। ये पतियाँ पंथ बन गई। यदि अजमेर वाला बंगाल वाले भाई को गलत बताए, बुंदेलखण्ड वाले को गलत बताये तो मैं आपसे पूँछता हूँ कि कौन गलत है, कौन सही है? उत्तर यही है कि सभी सही हैं, कोई गलत नहीं है, पिता सबको समान दृष्टि से देख रहा है क्योंकि वही सबसे ज्यादा समझदार है। जो श्रद्धानी होता है वह पंथ के झंझटों से बहुत ऊपर उठा हुआ होता है, जो श्रद्धानी नहीं होता वह अपने आपको अच्छा सिद्ध करने का कोरा दम्भ करता हुआ घोर पाप की धूल से लिप्त हो जाता है।

पंथ माहौल के अनुसार चलने के योग्य हो सकता है लेकिन श्रद्धान के योग्य नहीं हो सकता।

कोई कहता है, सचित्त फल-फूल पूजा में चढ़ाने से पाप लगता है। पाप तो मिथ्यात्व की बातों में लगता है, अहंकार की पुष्टि में लगता है, मिथ्यात्व को फैलाने में लगता है। **हरे फल-फूल पूजन में चढाने से पूजा सचित्त नहीं हो जाती बल्कि जीवित भगवान सामने होने पर यदि चावल से भी पूजन की जाये तो सचित्त कहलाती है और प्रतिमा की पूजन हरे फल-फूल से करें तो भी अचित्त पूजा कहलाती है। यदि मुनिराज सामने बैठे हों और सामने भगवान की प्रतिमा हो, दोनों ही एक साथ पूजा की जाये तो वह पूजा सचित्ताचित्त कहलाती है। द्रव्य की सचित्तता और अचित्तता से पूजन सचित्त और अचित्त नहीं होती। जिसकी पूजा की जा रही है उसके जीवित और अजीवित होने से सचित्त और अचित्त पूजा होती है।** इसे जानने से हमारी भ्रांतियाँ दूर हो जायेंगी।

कई लोग भ्रांतिवश तेरा को तेरह कहने लगे फिर व्याख्या करने लगे, 5 महाव्रत, 5 समिति, 3 गुप्ति ये तेरह पंथी हैं और जो बारह व्रत और अष्टमूलगुण पालते हैं ये बीस पंथी हैं इसमें फल-फूल की कोई बात नहीं है। मेरा एक चिंतन है कि **हरे फल चढ़ाने से बीसपंथी हो जाते हैं और चढ़ा जाने (खाने) से तेरापंथी बने रहते हैं कैसी हास्यप्रद मूर्खता की बातें हैं ?** कुछ एकांतमत की पुष्टि करने वाले अपने आपको, साधुओं को न मानकर, शुद्ध तेरा पंथी कहने लगे, अतः पंथ का झंझट अहंकार, अज्ञानता, कूपमण्डूक, पक्षपात के प्रतीक हैं। इसे धर्म मानना मूर्खता बढ़ाना है, श्रद्धान अपने जीवन को स्वच्छ खिला हुआ बनाने का तरीका है, इसलिए **न तेरा पंथी बनने में दंभ करें न बीस पंथी में अहं करें, केवल वीतरागी पथ पर श्रद्धान करें।**

वीतरागी धर्म को भरत क्षेत्र, विदेह क्षेत्र, ऐरावत क्षेत्र एवं सारे देव-नारकी स्वीकार करते हैं। पंथ को चंद अज्ञानी ही स्वीकार करते हैं। पंथ अपने ही घर में सबको स्वीकार नहीं होता है।

सत्य एक है, सही श्रद्धान एक है, मत अनेक हो सकते हैं। यदि एक हजार सत्य के अन्वेषी हों सभी के अभिप्रायः को पूँछा जाये तो सभी का अभिप्रायः एक ही निकलेगा सभी सम्यग्दृष्टि मोक्ष प्राप्ति का ही लक्ष्य बताएंगे लेकिन हजार गलत मार्गी हों उनसे लक्ष्य पूँछे जायें तो एक हजार लक्ष्य निकलेंगे। भ्रांति वाले, सत्य को न जानते

आज के श्रद्धान पर डालिये नजर

आकांक्षा की श्रद्धाः– हमें भगवान की भक्ति से कुछ इच्छित वस्तु मिल जाती है, तो उन भगवान पर हमारा झुकाव बन जाता अन्य पर नहीं, जैसे एक लड़का आदिनाथ की पूजन करता था परीक्षा में प्रथम आने की इच्छा भगवान को कही वह सैकेण्ड आया फिर पूजन छोड़ दी, महावीर की करने लगा, फिर भी सैकेण्ड आया, फिर रामचन्द्रजी की करने लगा फिर भी सैकेण्ड आया, एक वर्ष हनुमानजी की पूजन की– प्रथम आया। उसने अपने मन में कहा ये ही ठीक हैं, शेष भगवान कमजारे हैं, बेकार हैं, इन्हीं पर अपनी श्रद्धा है ये श्रद्धा वास्तविक नहीं पास होने वाली श्रद्धा है।

वस्तु श्रद्धाः– कोई महाराज ने किसी को कोई वस्तु पेन डायरी या कोई पुस्तक दे दी तो उन पर श्रद्धा हो गई दूसरे उनसे ज्यादा गुणी उन पर श्रद्धा नहीं हो पाई। यह श्रद्धा वास्तविक नहीं वस्तु की श्रद्धा है। वस्तु नहीं देते तो सामान्य हो जाते हैं।

मंत्र-यंत्र श्रद्धाः– हमारे घर में परेशानियाँ हैं कोई धन गायब कर देता है, कहीं व्यापार अच्छा नहीं चलता, कहीं धन नहीं ठहरता, कहीं शान्ति नहीं, कहीं बुद्धि से कमजोर हैं आदि-आदि ऐसे लोग महाराज के पास जाते हैं तो कोई मंत्र-तंत्र-यंत्र मांगने लगते हैं यदि महाराज तंत्र-मंत्र बता देते हैं तो वह व्यक्ति महाराज के पास आने लगता है, लोग लोग यह समझते हैं कि बहुत धर्मात्मा हो गया। यह व्यक्ति तंत्र-मंत्र की श्रद्धा वाला है इसे मंत्र-तंत्र सत्य लगे हैं और सत्य तो यह है कि ये परेशानी के कारण मंत्र-तंत्र वाले महाराज को मना रहा है सही श्रद्धान की कोई बात नहीं है।

प्रेम की श्रद्धाः– कोई साधु आपसे विशेषता से बात करता है 10 लोगों के बीच में आपसे ही बात करता है कोई सीक्रेट बात बताते हुए आपको वात्सल्य देता है लेकिन दूसरा साधु तपस्वी है ज्ञानी है आप फिर भी उसके पास बात करने नहीं जाते ये प्रेम की श्रद्धा है गुणों को देखकर गुणों को पाने की श्रद्धा नहीं।

दवा की श्रद्धाः– कोई व्यक्ति साधु के पास आकर अपनी बीमारी बताता है, साधु कोई औषधि बता देता है, वह उससे ठीक हो जाता तो उसकी श्रद्धा बन जाती है, यह श्रद्धा दवा की श्रद्धा है दवा न मिलने पर दब जाती है, सत्य से इसका कोई ताल्लुक नहीं है।

सम्मान व प्रशंसाः– आप साधु के पास जाते हैं तुम्हें तत्काल समय देता है, तुम जो भी कहते हो साधु उसे मान लेता है, प्रवचनों में आप का नाम लेकर के तारीफ

करता है, आपको बराबर देखता हुआ हँसता है मंच से सम्मान कराता है तुम्हारे खाने-पीने का ध्यान रखता है और दूसरा साधु जो ज्ञानी विरक्त और महान है वो कुछ नहीं करता है, सत्य यह है आप साधु के गुणों से प्रेम नहीं करते आप अपने अहंकार और सम्मान को प्रेम करते हो वो जहाँ मिलता है वहाँ जाते हो जहाँ नहीं मिलता वहाँ नहीं जाते हो।

शक्ल व आवाजः– कोई महाराज का सुन्दर और छरहरा गोरा शरीर है सुन्दर चेहरा व बाल हैं और अच्छा गाते हैं गीतों के प्रशंसक उस साधु के पास बहुत जाने लगें तो सत्य यह है कि ये व्यक्ति रूप व आवाज के कारण साधु के पास गया, गुणों के कारण नहीं यह सही श्रद्धान नहीं है, हमारी वासना की पुष्टि है।

संकट निवारणः– हमारे ऊपर दुष्ट ग्रहों का प्रकोप चल रहा व्यंतर बाधाएँ सता रहीं हैं गृह कलह क्या हुआ साधु इनको उपदेश देकर शांत करा देता है अथवा साधु कहीं जमीन पर गढ़ा हुआ धन बता देता है कोई व्यापार बता देता है या कोई वस्तु खरीदने व बेचने को कह देता है, उसमें आप को बहुत लाभ होता है आपको वही साधु जँच जाता है, शेष शुद्धाचरण वाले साधु के दर्शन करना भी आपको खराब लगता है तो समझिये आप साधु के गुणों से नहीं धन से प्रेम करने वाले हो जो धन को पाने का रास्ता बता रहा है उसे मानते हो जो धर्म बता रहा है उसकी शक्ल भी नहीं देखना चाहते हो।

विचारों का तालमेलः– आप सबकुछ खाते-पीते हैं, कुछ त्याग नहीं करना चाहते हैं, नियम में नहीं बँधना चाहते हैं, पढ़े-लिखे हैं यदि साधु प्रवचन में कहता है कि नियम लेने की कोई जरूरत नहीं है। हमें ज्ञान की जरूरत है, नियम तो वे लेते हैं जो ज्ञान से कमजोर होते हैं, विचारों का तालमेल हुआ आपको साधु पसंद आ गया अथवा आप विद्वान, आध्यात्मिक हैं साधु यदि मौन अध्यात्म में रहता है तो तुम्हें अच्छा लगता है अन्यथा साधु ही तुम्हारी नजरों में बेकार हो जाता है। ये वास्तविक श्रद्धान नहीं, विचारों के तालमेल की दोस्ती है। इसका धर्म से कोई संबंध नहीं है।

पक्ष की सिद्धि सेः– यदि आप तेरा पंथ की परंपरा में पले हैं अथवा बीस पंथ के माहोल में ढले हैं तब आपका एक पक्षपात हो जाता है। आप तेरा पंथ की बात करते हैं, साधु उसे स्वीकार नहीं करता। आप बीस पंथ की बात करते हैं साधु स्वीकार नहीं करता तो आप ऐसे साधु के पास जाना बंद कर देते हैं। जो साधु तुम्हारे पक्ष की बात मान लेता है वहाँ सिर पटकने लगते हैं। सत्यता पर डालिये नजर, आप गुणों से प्रेम करते हैं या पक्ष से।

अहंकार पुष्टि:- हम आपस में कभी किन्हीं बातों के कारण लड़ जाते हैं। तेरा या बीस पंथ के कारण झगड़ा कर जाते हैं, कभी समाज में किसी को नीचा दिखाने के उद्‌देश्य से उस व्यक्ति के बारे में कुछ साधु से कहलाना चाहते हैं। स्वयं कहते हैं तो फिट जायेंगे, लड़ाईयां हो जायेंगी और साधु इन बातों में आपके पक्ष को पुष्ट कर देता है, आपके अहंकार को और बढ़ा देता है तब आप उस साधु के पास दौड़-दौड़कर जाते हैं, सिर झुकाते हैं। दूसरा साधु इन झंझटों से दूर वीतरागी है, वहाँ नहीं जाते। आप न साधु को प्रेम करते हो न साधु के गुणों को, आप अपने अहंकार के बढ़ावा को प्रेम करते हो।

धन प्रेमी :- आप किसी संस्था के व्यवस्थापक हैं, कोई साधु आपकी संस्था की व्यवस्था में भरसक प्रयास करता है, धन जुटाने के लिए प्रवचन करता है, लोगों से धन दिलवाता है, आप उसके पास कई बार जाते हो, वो जिस-जिस नगर में जाता है आप तत्काल पहुँच जाते हैं। तुम्हें कोई दो कौड़ी भी नहीं देगा। साधु से लाखों मिलते हैं। आप साधु को नाममात्र का भी प्रेम नहीं करते, सारा प्रेम धन पर है। ये धन की श्रद्धा दूसरे साधु के सामने न जाने को मजबूर कर देती है।

वासना की श्रद्धा:- कोई महाराज के पास लड़कियाँ बैठी हैं या बैठती हैं तो कुछ लड़के भी वहाँ बैठनले लगते हैं, ऐसे कई लड़के भी आ जाते हैं जो मंदिर नहीं आते थे, लड़कियाँ देखकर आने लगे अथवा प्रवचन में या कोई धार्मिक शिविर अनुष्ठान में। लड़कियाँ भी यही चाहती हैं कि हमें कोई देखे और लड़के भी लड़कियों की वजह से मंदिर जाते हैं। सत्य यह है कि ये वासना की श्रद्धा है, साधु या धर्म पर श्रद्धा की कोई बात नहीं।

ख्याति व लाभ की श्रद्धा:- कोई साधु के पास बहुत भीड़ होती है नेता लोग आते हैं इनके पास जाने पर आपकी भी ख्याति बढ़ती है, दूसरे साधु के पास भीड़ नहीं आती आप वहाँ जाते भी नहीं ये ख्याति की श्रद्धा है साधु के पास जाने से तुम्हारा महिलाओं से लड़कियों से परिचय होता है, जिससे आपकी दुकान की ग्राहकी बढ़ती है, इसलिए आप साधु के पास जाते हैं यह लाभ की श्रद्धा है सही श्रद्धा नहीं।

इस तरह झूठी बनावटी संसार बढ़ाने वाली श्रद्धा की कई शक्लें हैं। हमने इतनी चिंतन की हैं इसके अलावा भी कई हो सकती हैं। अब देखिये असली श्रद्धा का स्वरूप।

सही श्रद्धा की शक्ल

सबसे पहिले हम गलत श्रद्धा को समझ लें तो सही श्रद्धा का पता लगाना बहुत ही आसान है। गलत के कई ढंग हैं, कई तरीके हैं, कई आयाम हैं। सत्य के कई ढंग नहीं है। सही में तो एक ही चीज पर नजर है The Virteous see virtues not the person. **''गुणी गुणों को देखते हैं व्यक्ति को नहीं''** बाजार में व्यक्ति उसी पर नजर डालता है जिसे वह चाहता है। मण्डी में सभी सब्जी देखता है लेकिन भाव उसी के पूछता है, जो चाहता है।

हम सब्जी मण्डी जाते हैं तो सब्जी लेने का भाव, बाजार जाते हैं तो कुछ खरीदने का भाव, शादी करने जाते हैं तो वंश चलाने और वासनापूर्ति का भाव, परीक्षा के वक्त बहुत पढ़ते हैं तो अच्छे अंकों से पास होने का भाव, कुछ खाते-पीते हैं तो पेट की भूख मिटाने का भाव, शास्त्रों को पढ़ते हैं तो ज्ञान प्राप्त करने का भाव और स्कूल में बच्चे को पढ़ने भेजते हैं तो शिक्षा प्राप्त कराने का भाव छिपा होता है। भाव वह है जो शब्दों से अभिव्यक्त नहीं होता है, बाह्य क्रियाओं को देखकर अनुमान लगा लिया जाता है। ठीक वैसे ही जब हमारा मंदिर जाने का विचार आता है तो हमारा भाव सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को प्राप्त करने का होना चाहिए। यह अकाट्य सत्य है और सत्य यह भी है कि 90 प्रतिशत लोग सत्य के दर्पण के पास असत्य की पुष्टि करते हैं। साधु इन बातों को जानता भी है तो भी क्या कर सकता है ? श्रावक जानता है वह बदल भी सकता है।

कई लोग ऐसे भी होते हैं जो वृद्ध हैं घर पर कोई काम नहीं है, मंदिर में साधु हैं तो गुण प्राप्ति की कोई बात नहीं होती केवल समय गुजारने की दृष्टि से आ जाते हैं। लोग यही समझते हैं कि वह व्यक्ति बहुत धर्मात्मा है। कभी-कभी साधु से तर्क-वितर्क कर लेते हैं, कोई वाद-विवाद भी कर लेते हैं और अपने आपको बहुत श्रेष्ठ समझने का दंभ भी कर लेते हैं।

हमें सही दृष्टि बनाने के लिए गुणों पर नज़र डालनी पड़ेगी। जब हम गुणों पर नज़र डाल देंगे तो हमारा सिर प्रत्येक साधु के चरणों में झुक जायेगा। जो गुणों के उपासक नहीं होते और अपने आपको धर्मी बताना चाहते हैं, ऐसे लोग किन्हीं साधुओं की आलोचना करने में लग जाते हैं। यदि हम आलोचना करके सामने वाले साधु को गलत या कमजोर सि) नहीं कर सकेंगे तो फिर उन्हीं के ऊपर एक आक्षेप आ जायेगा कि तुम धर्मी नहीं हो। पुरानी मशीनों से कभी कम्पनी सफल नहीं होती, वैसे ही बूढ़े लोगों से धर्म की प्रभावना नहीं होती। जो गुणग्राही नहीं, समय गुजारने के लिए धर्म करते हैं।

सही यह है कि हम जब परमात्मा की आराधना करें तब परमात्मा के स्वरूप का अनुभव करें, साधुओं के चरणों में जायें, विनयपूर्वक उचित सम्मान करें तत्पश्चात् उन्हें देखकर अपने जीवन में संयम पाने की भावना करें और जब सत्यता को प्रकाशित करने वाला शास्त्र पढ़ें तो विनयपूर्वक अहोभाव जागृत करके उसे शक्ति अनुसार जीवन में आचरित करने का विचार रखें तो हम सत्यता के बिन्दू पर पहुँच सकते हैं। ये बात पूर्ण सत्य है कि **धर्म का चिंतन करो सबका चिंतन स्वतः ही हो जायेगा। धर्म में सारे कर्म समाहित हैं। हम स्वयं के विचारों को पढ़ने का प्रयास करें हम खुद ही समझ लेंगे कि सत्य क्या है? दिल से सत्य ही सत्य निकलते हैं। हृदय से सत्य वस्तु ढूँढना दुनियाँ में असम्भव है।**

कई लोग इस तरह की बात कहते हैं कि हमें कोई दु:ख होगा तो हम किससे पूछेंगे ? गुरु ही तो हैं पूछने के लिए। ये भी बात सत्य है कि गुरु से ही पूछेंगे लेकिन ये पूछना गुरु की कृपा होगी इसे श्रद्धान न बनाया जाये श्रद्धान पूर्वक यदि ये सब प्रश्न पूछे भी जावें, श्रद्धान पूर्वक हम भौतिक सुख चाहें तो गलत नहीं है लेकिन जहाँ श्रद्धान हो ही नहीं केवल वस्तु की चाह ही हो वह गलत है और इसी बात को ध्यान में रखते हुए सारे तथ्यों को समझना चाहिए।

सत्य पाने की योग्यता

चाहे अच्छा हो या बुरा, चाहे जिन्दगी हो या मौत, चाहे बनाना हो या मिटाना, चाहे झुकाना हो या झुकना, चाहे तैरना हो या डूबना सभी के लिए अच्छी या बुरी योग्यता होना पूर्व में ही आवश्यक है। योग्यता के बिना किसी भी वस्तु को पाना असंभव है, एक पुत्र की प्राप्ति के लिये वयस्क होना, शादीशुदा होना, पत्नि बाँझ न होना, पुरुषत्व का होना ये सभी बातें आवश्यक हैं, ठीक वैसे ही सत्य हो या असत्य दोनों को पाने की योग्यता होना आवश्यक है। गलत से हम बहुत समय से परिचित हैं भूल इतनी सी है कि जिस गलत से हम परिचित हैं वह हमने आज तक गलत स्वीकार नहीं किया और जो त्रिकाल सत्य है, अकाट्य सत्य है हमेशा सत्य रहेगा उसे हमने आज तक सत्य स्वीकार नहीं किया। वस्तु उपलब्ध बाद में होती है, पहिले स्वीकार होती है, वस्तु प्राप्त बाद में होती है, पहिले उसके लिए प्रयास किया जाता है वे सत्य को हासिल करने के पूर्व होने वाली योग्यतायें इस प्रकार है:-

पहली शर्त है कि सत्य पाने वाला प्राणी चाहे देव गति का हो चाहे नरक गति, चाहे पशुगति चाहे मनुष्य गति का हो उसके पास शरीर, मुँह, नाक, आँख, कान और मन ये सभी चीजें होना चाहिए एक भी चीज कम होगी तो सत्य उपलब्ध नहीं होगा, कमजोर होगी तो हो सकता है।

दूसरी शर्त है कि वह जागृत हो अंदर से भी सत्य की सोच में हो और बाहर से भी सोया नहीं हो। सोते हुए और सत्य की सोच से बाहर रहने वाले लोग कभी भी सत्य को उपलब्ध नहीं होते।

तीसरी शर्त उसकी सोच जीवन के लिये सकारात्मक हो नकारात्मक नहीं। जो भी सोच रहा हो उसमें समग्रता से डूबा हो सारा मन उसी बात पर पूर्णतः केन्द्रित हो, एकाग्र हो चलायमान नहीं है।

चौथी शर्त उसके अंदर सत्य को प्राप्त करने योग्य पर्याप्त शक्ति हो, शक्ति से मतलब जब सत्य उपलब्ध हो तब मन से उसे स्वीकार करने की शक्ति से वह ओत-प्रोत हो।

पाँचवी शर्त है कि अपना भला सोचने वाला हो, सारे कार्य प्रशस्त मुद्रा में करने वाला हो, कार्य-अकार्य का, लाभ-अलाभ का, हित-अहित का, कर्तव्य-अकर्तव्य का विचारक हो।

छअवी शर्त है कि वह सत्य का बाहर का रूप और अंतस् का स्वरूप जानने वाला हो, स्वयं ही समझने की क्षमता हो, कषाय से रहित शांत परिणामी हो, अपनी गलती को स्वीकार करने वाला हो, यह सब होते हुए वह आत्मा के शुद्ध गुणों का चिंतन करने वाला हो।

सातवीं शर्त है कि उसमें सत्य को स्वीकार करने की क्षमता हो इस क्षमता के अभाव में सभी बातें होने पर भी सत्य उपलब्ध नहीं हो सकेगा। इसी क्षमता को भव्यता कहते हैं।

दुनियाँ में तीन तरह की स्त्रियाँ होती हैं एक वे होती हैं जिनमें माँ बनने की क्षमता नहीं होती वो इस जीवन में कभी भी माँ नहीं बन सकेंगी। एक वे स्त्री होती हैं जिनमें माँ बनने की क्षमता होती है लेकिन शादी नहीं होती। एक वे होती हैं जिनमें योग्यता भी होती है और शादी भी और माँ भी बनती हैं ऐसी बहुत कम हैं जो माँ बनने योग्य न हों, ठीक वैसे ही दो तरह के लोग होते हैं एक वे जो सत्य को स्वीकार कर लेते हैं, एक वे जो स्वीकार नहीं करते हैं। सत्य उपलब्ध चाहे आज हो चाहे करोड़ों वर्ष भटकने के बाद, उससे पहले उसे स्वीकार तो करना ही पड़ेगा इसकी क्षमता ही नहीं हुई तो वह कभी भी सत्य नहीं पा सकता।

एक जमीन में मिट्टी के साथ कंकड़ हैं, एक जमीन में मिट्टी है एक जमीन में पत्थर हैं। यदि हम तीनों जमीन में बीज डालेंगे तो मिट्टी वाली जमीन में जल्दी, मिट्टी व कंकड़ वाली जमीन में देर में और पत्थर वाली जमीन में बीज कभी फलेगा ही नहीं। ये जमीन की क्षमताएँ- भव्य, अभव्य दूरानुदूर भव्य के नाम से जीवात्मक हैं। पर हमें सत्य

उपलब्ध हो भी और न भी हो(लेकिन इनके बिना सत्य प्राप्त नहीं होगा।

इन सभी योग्यताओं के होने के बाद ही सत्य का सूरज हमें दिखाई देता है। इनमें से एक भी योग्यता न होने पर किसी को भी वह सत्य नसीब नहीं हो सकता जो सार्वभौमिक है।

सत्य की उपलब्धि होने पर अभिव्यक्त लक्षण

अन्याय-अनीति-अभक्ष:- सत्योपलब्धि वाला कभी भी अन्याय नहीं करेगा न करने को कहेगा और न ही करने वाले की प्रशंसा करेगा, अनीति नहीं अपनाएगा और न ही अभक्ष भक्षण करेगा।

उद्रेक रहित:- कोई व्यक्ति उसके सामने क्रोधादि के शब्द भी बोले अथवा कोई विपरीत अवस्था हो तो वह क्रोध को शांत करने में समर्थ होगा।

भव-भीरू:- सत्य, भगवान का ही रूप है इसे पाने वाला संसार में रहना पसंद नहीं करेगा वह हमेशा परमात्मा के पास पहुंचने का ही विचार करता होगा, इसलिए सांसारिक-कार्यो से हमेशा दूर ही रहेगा।

दयाशील:- जिन्हें असत्य दुख दे रहा है, उन्हें सत्य उपलब्ध हो ऐसी भावना करते हुए दुखियों पर हमेशा करुणाशील रहेगा। किसी को सताएगा नहीं यदि भूल से भी किसी को पीड़ा पहुँच जायेगी तो तत्काल क्षमाभाव करता हुआ दयाशील होगा।

अस्तित्व ज्ञाता:- परमात्मा सत्य है, परम सत्य है और आत्मा ही परमात्मा है, अत: उसे यह ज्ञान होता है कि हमारा वास्तविक स्वरूप क्या है? और झूंठा स्वरूप क्या है? अपने अस्तित्व को जानने वाला होगा।

आराधना:- ज्ञानियों की सेवा में रत रहेगा, साधुओं की संगति करेगा, वीतरागी देव के स्वरूप को लखेगा सत्य बात चाहे छोटे ने भी कही है उसे स्वीकार करेगा। देव-शास्त्र-गुरुओं की आज्ञा की कभी भी अवज्ञा नहीं करेगा।

स्याद्वाद अनेकांत:- स्याद्वाद की पद्धति को वह जाने या न जाने अनेकांत धर्म को वह दूसरों को समझा सके या न समझा सके लेकिन कोई अनेकांत मयी बात कहेगा उसे स्वीकार करेगा स्याद्वाद को स्वीकार करेगा।

सत्य को पाने वाला कहाँ-कहाँ नहीं जन्मता ? :- सत्य की उपलब्धि से प्राणी कभी भी नीच कुल जैसे जमादार-धानुक, धोबी, .चमार, नारकी पर्यायों में भविष्य में नहीं जन्मता हैं हमेशा उसका जन्म मनुष्य और देवों में होता है वह भी राजाओं के महल

में, देवों में इन्द्र होता है।

स्त्री नहीं बनता और न ही नपुंसक बनता है, न ही पेड़, कीड़े-मकोड़े, मच्छर आदि बनता है।

शरीर कभी रोगी प्राप्त नहीं होता हमेशा स्वस्थ रहने वाला परम सुन्दर परं शक्तिवान शरीर प्राप्त होता है।

अर्द्धपुद्गल परावर्तन काल तक संसार में रहकर वह परमात्मा पद को प्राप्त होकर सिद्धालय में जाता है।

सत्य की उपलब्धि कहाँ हो सकती है?

सत्य की उपलब्धि कहीं भी हो सकती है ये कोई जरूरी नहीं कि सत्य साधु बनकर ही प्राप्त होगा, घर में भी प्राप्त हो सकता है, यह भी जरूरी नहीं कि साधु बनने पर प्राप्त हो ही जायेगा, कई साधु भी ऐसे होते हैं जिन्हें सत्य का अता-पता ही नहीं मालूम। कई श्रावक ऐसे होते हैं जिन्हें सत्य हांसिल है। यदि कोई गृहस्थ को सत्य प्राप्त हो गया है और एक साधु को नहीं हो पाया है तो परमात्मा यही कहेगा कि वह गृहस्थ साधु से अच्छा है क्योंकि गृहस्थ ही परमात्मा के पास जा सकेगा वह साधु नहीं। सत्य पाने के लिए गहरी आँख की जरूरत है सत्य का हृदय बहुत विशाल है परमात्मा उतना ही बड़ा है, जितना बड़ा सत्य का हृदय है, यदि ऐसा नहीं होता तो परमात्मा रूपी राम, हनुमान के हृदय में कैसे प्रकट होते ? सत्य और परमात्मा का व्यास एक बराबर है ये वहीं समाहित होता है जिसका दिल परमात्मा के बराबर होता हैं। छोटे दिल में परमात्मा आकर अपने अस्तित्व को संकुचित नहीं करना चाहता इसलिए छोटे दिल में संकीर्ण बुद्धि में परमात्मा का प्रवेश नहीं होता।

कई लोग कहते हैं कि परमात्मा एक है उसके रूप अनेक हैं यदि परमात्मा एक है तो उसका रूप भी एक ही है यदि रागी रूप परमात्मा का होगा तो परमात्मा रागी भी होगा और रागी एक संसारी होता है। सत्य तो यह है कि परमात्मा के तन पर एक कपड़ा क्या धागा भी नहीं होना चाहिए, न ही उसके हाथ में हथियार आदि होना चाहिए, न ही चेहरे पर क्रोधादि कषाय होना चाहिए परमात्मा की मुद्रा ऐसी होनी चाहिए जिसे देखते हमारे अंदर त्याग आने लगे और विकल्पों की भूमिका समाप्त होने लगे तथा हम स्वयं को बिल्कुल हल्का सा प्रतीत करने लगें यदि परमात्मा के हाथ में हथियार होंगे तो डाकू

शिकारी और परमात्मा में क्या अंतर होगा? यदि कपड़े पहिने होगा तो कपड़े वही पहिनते हैं जिनके अंदर वासना के विकार होते हैं, बालक को परमात्मा का रूप कहते हैं इसका मतलब है जैसे बालक कपड़े रहित निर्विकारी है वैसा ही परमात्मा होता है, कपड़े मुकुटादि युक्त परमात्मा मानेंगबे तो एक दूल्हा और परमात्मा में क्या अंतर होगा ? अत: परमात्मा का वास्तविक रूप जो दुनियो से उठ चुका है, दुनियाँ की वस्तु से जो दूर हो गया है तथा राग- 'द्वेष, अच्छे-बुरे के विकल्प उसको नहीं हैं, स्वयं में ही स्वयं के बल से जो लवलीन है सही में वही परमात्मा हो सकता है, ऐसे रूप कई तरह के नहीं एक ही तरह का होगा नग्न रूप कई तरह के नहीं हो सकते।

सत्य की अनुभूति करने के लिए सत्यरूप सामने होना जरूरी है, सत्य भगवान है अत: भगवान का वह सर्वमान्य सत्य रूप बालक वत् वीतराग रूप ही हमें सत्य तक पहुँचा सकता है जब हम पहलवान को सामने देखते हैं तो हमारे भी पहलवान बनने के भाव होने लगते हैं जब कोई हीरो का चित्र देखते हैं तो हीरो बनने के भाव होने लगते हैं जब किसी वीतरागी परमात्मा का चित्र देखते हैं तो हमारे अंदर वीतरागता का बीज प्रस्फुटित होने लगता है। हम परमात्मा का रूप जानते ही सत्य से अभिभूत हो जाते हैं, सत्य ने परमात्मा को बनाया या परमात्मा ने सत्य को ? सत्य था परमात्मा सत्यरूप हो गया। सत्य था-राम, महावीर, हनुमान धरती पर हुए फिर पूर्ण सत्य को उपलब्ध हुए और परमात्मा हो गये हम भी सत्य पायें तो परमात्मा पद को उपलब्ध हो सकेंगे।

सत्य विश्वास से और प्राप्त करके

सत्य को दोनों तरीके से पाया जा सकता है प्रथम अवस्था में विश्वास पर ही चलना पड़ता है। सर्वप्रथम हम स्कूल में टीचर पर विश्वास ही करते हैं, वह एक के बाद दो के बाद तीन कहता है हम मान लेते हैं, यदि नहीं मानेंगे तो आगे नहीं बढ़ सकते हैं जब तक हम सत्य को अनुभूत नहीं कर सके हैं तब तक हम उसकी बात मानें जिसने सत्य को पालिया है, इसलिए कहा जाता है कि देव-शास्त्र-गुरु की बात पर श्रद्धान करो उनकी बात की अवहेलना कभी न करो। हम अवहेलना करेंगे तो सत्य को नहीं पा सकते हैं और सत्य पा लेने के बाद विश्वास करने की कोई जरूरत नहीं है। विश्वास तभी तक है जब तक हमें सत्य उपलब्ध नहीं हुआ है।

दो तरह के शिष्य होते हैं एक आज्ञा प्रधानी शिष्य होते हैं एक परीक्षा प्रधानी। जो नासमझ होते हैं उन्हें आज्ञा ही प्रधान होती है और जो परीक्षण करके सत्य का अनुभव कर सकते हैं वे आज्ञा की अवमानना न करते हुए परीक्षा प्रधानी होते हैं लेकिन जो अनुभव कर नहीं पाते और परीक्षा प्रधानी अपने आपको समझने लगते हैं वे लोग सत्य को कभी भी अनुभव नहीं कर पाते हैं और अहंकारी बन जाते हैं।

सत्य पाने के दो तरीके हैं एक वह कि हमें दूसरे के उपदेश से सत्य का पता चले फिर हम उसको प्राप्त करें और एक वह है जो स्वयं ही सोचें स्वयं ही उत्तर निकालें और सत्य को प्राप्त कर लें। जैसे परीक्षा में पास दो तरीके से होते हैं एक वे जो गुरुओं से पढ़कर कॉलेज जाकर ट्यूशन पढ़कर पास होते हैं एक वे जो टयूशन नहीं पढ़ते और पास हो जाते हैं एक स्वयं से ही हासिल होता है कभी दूसरों की प्रेरणा से प्राप्त होता हैं।

सत्य एक, पर रूप तीन

पहला सत्य वह है जिसमें सारे उद्रेक, कषाय विषयों की मंद अवस्था में जागृत होते हुए क्षणिक आत्मा स्वरूप का अनुभव आकाश की बिजली की तरह एक चमक रूप में पैदा होता है लेकिन क्षण भर बाद ही वह कषाय उठ जाती है वह अनुभव विलुप्त हो जाता है, यह उद्रेक के दबाव में प्राप्त होने वाला क्षणिक सत्य है इसे ही उपशम सत्य कहा जाता है।

दूसरा सत्य वह जिसमें उसने सत्यता का अनुभव किया था वह अनुभव कषाय और उद्रेक में जाकर मिल जाता है, सिकंजी पीते समय नींबू के रस व शक्कर दोनों का वेदन होता है वैसे ही उद्रेक भी रहता है और सत्य भी वेदन होता है दोनों की मिली अवस्था होती है यह मिश्र सत्य होता है।

तीसरा सत्य बिल्कुल साफ है, इसमें कषायों का कोई उद्रेक नहीं रहता है, इसमें सत्य का वेदन निष्पक्ष साफ होता है।

जैसे एक तालाब का गन्दा पानी एक गिलास में भरकर लायें इसमें साफ जल भी है धूल के कण भी हैं, थोड़ी सी फिटकरी डाल दी तो कचड़ा नीचे बैठ जाता है पानी ऊपर साफ दिखने लगता है, यह कचड़ा दब गया है और यह स्पष्ट अनुभव होता है- जल

में कचड़ा होते हुए भी बिल्कुल साफ है, यह उपशम सत्य है, जब उसको हिला दिया जाये तो उसकी मिली अवस्था हो जाती है पूर्व में उपशम सत्य देखने के बाद ही तमला हुआ सत्य होता है। जो पूर्व में पानी और कचरा अलग-अलग देख लेगा वहीं मिले हुए जल में जल की निर्मलता को स्वीकार करेगा, तीसरा जब वह निर्मल जल कचड़े के ऊपर था तब एक-दूसरे गिलास में पानी निकाल लें कचड़ा अलग हो जायेगा फिर पानी फिल्टर की तरह हो जायेगा फिर उसे कितना भी हिलाओ वह गन्दा नहीं होगा यह निष्पक्ष सत्य है।

सत्य एक, पर पाने के तरीके बहुत

सबसे बड़ा सत्य तो यही है कि हम अपने आपको स्वयं से ही जानें हमारे अन्दर स्वयं को और दूसरों को दोनों को जानने का ज्ञान है **हम स्वयं को ही जान लें तो दूसरों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है लेकिन दूसरों का ज्ञान करने पर स्वयं का ज्ञान हो ये जरूरी नहीं है।**

ताश के पत्तों में दहले को गुलाम पीट देता है, गुलाम को बेगम पीट देती है, बेगम को बादशाह पीट देता है और बादशाह को इक्का पीट देता है, इक्का को कोई नहीं पीट सकता है, अत: एक (स्वयं) का ज्ञान सबसे महान है, ''एगं जानाति सव्वं जानाति'' हर आदमी की ख्वाहिश कि सत्य मेरी झोली में हो इसीलिए सत्य जानने के प्रति हर आदमी की रुचि है, सत्य जानकर उस आनन्द आता है सत्य न मिलने पर वह स्वयं को हीन समझता है। आओ सत्य की तरीके जानें जिससे हम भी सत्य को अपने जेब में रख सकें। क्योंकि सत्य में धर्म-भगवान-गुरु बड़ों का सम्मान सारी अच्छाईयाँ विद्यमान हैं।

- जिसने सत्य को अनुभूत कर लिया है, उसकी हर बात को सही समझिये चाहे आपकी समझ में आये या नहीं उसमें अपने विचारों की समझ से मीन-मेक न किालिये उसे समझने का तो प्रयास करिये आज्ञा स्वीकार करिये तहे दिल से।
- निष्पक्ष होकर सच्चा मार्ग समझिये और परखिये कि किस मार्ग पर किस भेष में सबसे कम विकल्प है, सही मार्ग तो निर्विकल्प ही है उसे खोजें।
- कोई सच्चे मार्ग पर अनुभवी पथिक उपदेश देता है तो यह विश्वास रखिये कि वह गलत नहीं बोल सकता चाहे मर जायेगा। ऐसा सोचकर उसके उपदेश पर श्रद्धान करिये तो सत्य उपज सकता है।
- सत्य को पाने वाले संत को, भगवंत को देखकर अथवा जिस ग्रंथ में सत्य का विवेचन हो उस शास्त्र को पढ़कर अपने अंदर अहोभाव करता हुआ अति

प्रफुल्लित होना।

- सत्य वक्ता यदि छोटे रूप में बड़ी बातें कहे या बड़े रूप में कहे अथवा बीज रूप में कहे संक्षेप रूप में कहे या अर्थ रूप में कहे सभी को सुनते हुए गद्गद् हो जाना, सत्य को सुनकर स्वयं को धन्य समझना और बताने वाले के प्रति कृतज्ञता जाहिर करने से सत्य उपलब्ध होता है।
- कोई आश्चर्य कारी ऋद्धि-सिद्धि देखने से हमार अंदर भी यह विश्वास जागृत होता है कि हम भी ऐसा कर सकते हैं।
- असत्य की वेदना तीव्र होने पर हमारा झुकाव सत्य के प्रति स्वयमेव हो जाता है।
- सत्य का स्वरूप दिखाने वाला सामने होने पर हमारा उसके गुणों में तीव्र लगाव होने पर सत्य उपलब्ध होता है।
- यदि हम किसी भी वस्तु को अच्छा और बुरा न कहें तथा उसके गुणों में तीव्र लगाव होने पर सत्य उपलब्ध होता है।
- यदि हम किसी भी वस्तु को अच्छा और बुरा न कहें तथा उसे अपनी भी न बनायें। हम स्वयं को जानने में राग-द्वेष-मोह न करें तो सत्य ही सत्य सामने आ जायेगा हम पायेंगे कि हमसे बड़ा सत्य कोई,, नहीं है हम सत्य हैं।
- सत्य, मन की विचारधाराओं पर नहीं पलता हृदय की अभिव्यक्ति से प्रकट होता है जिसके पास दिलदार और दीदार दिल नहीं वह सत्य कभी भी नहीं पा सकेगा। हृदय ही है जो सार्वभौमिक सत्य को स्वीकार करता है मन तो फिरंगी की तरह झूंठों को सत्य मान लेता है।
- हर कार्य में, कार्य किस ढंग से किया जावे कि सबसे प्रशंसनीय हो ऐसी सोच से सत्य उभकर सामने आता है।
- सत्य को पाने वाला व्यक्ति हमेशा अपना उत्थान चाहेगा यदि आपके जीवन का उत्थान होता जा रहा है तो समझना आप सत्य के नजदीक पहुँचते जा रहे हैं।
- सत्य एक ऊपर उठने वाली वस्तु है, जो इसे पकड़ता है ऊपर उठता जाता है, गलत एक ऐसा पत्थर है जिसे पकड़ते ही हमें थकान बोझ चिंता सताने लगती है, इसीलिए सत्य आते ही हम देव बनते हैं जो ऊपर हैं, महादेव बनते हैं जो सबसे ऊपर हैं और असत्य पाते ही हम नारकी बन जाते हैं जो नीचे है। यह

सत्य विनम्रता के द्वारा ही उपलब्ध होता है।

- सत्य को पाने वाले के अंदर सत्य की खोज करने में तत्परता उसमें तीव्र रुचि, सत्य से लाभ, असत्य से हानि सबका गहनता से ज्ञान होना चाहिए
- अपने अवगुणों की स्वयं ही आलोचना करने वाला और दूसरों के गुणों को देखकर हर्षित होता हुआ उसकी प्रशंसा करने वाला ही सत्य को पाने का हकदार है।

सत्य की उपलब्धि के लक्षण

जिस प्रकार एक स्त्री गर्भवती होती है उसके लक्षण स्वयंमेव ही प्रकट होने लगते हैं, एक बालक युवा होता है एक बालिका युवा होती है तो उसके लक्षण दिखाई देने लगते हैं, एक व्यक्ति को ज्ञान उपलब्ध हो जाये तो वैराग्य के लक्षण व दुनियाँ में उदासीनता के लक्षण स्पष्ट नज़र आने लगते हैं ठीक वैसे ही जिसको भी सत्य की उपलब्धि हुई हो उसके लक्षण उसके आचरण में स्पष्ट झलकते हैं यदि ये लक्षण झलकते हों तो यह समझना चाहिए कि इसे सत्य उपलब्धि हो गई हो- परमात्मा को सही तरह से जानकर अपने स्वाभाविक स्वरूप का अनुभव यदि हमें हुआ है सत्य के लक्षण तभी जीवन में प्रकट होंगे। ऐसा नहीं हुआ तो प्रकट नहीं होंगे।

जिस प्रकार दीपक जला है तो प्रकाश होगा ही, शरीर चल रहा है तो उसमें जीव है ही, आँखें लाल-पीली हैं तो राग-द्वेष है ही, यदि कोई मुनि नहीं बनता तो उसमें वासना होगी ही आदि। इसी तरह सत्य मिल गया है तो उसकी अभिव्यक्ति इन लक्षणों से होगी ही :-

परमात्मा परम सत्य है:- दिगम्बर गुरु आजन्म झूठ नहीं बोलते इन दोनों की बात में स्वप्न में भी शंका नहीं करता क्योंकि वह जान चुका है कि झूठ वही बोलते हैं जिनमें राग-द्वेष-पक्ष-कषाय होती है। दूसरी बात वह स्याद्वाद व अनेकांत से परिचित होने के कारण सभी अपेक्षाओं को समझता है इसलिए शंका नष्ट हो जाती है।

सत्य पाने वाला सत्य को पाने लिए सारा जीवन व्यतीत करता है वह संसार की वस्तुएँ पाना व्यर्थ समझता है, वह उसे पाना चाहता है जिसे पाने के बाद सभी पाने की इच्छा ही समाप्त हो जाती है वो हमेशा परमात्म तत्व को पाने की लालसा में डूबा रहता है।

यदि कोई सत्य पाने वाला कोई दिगम्बर संत कर्मोदय वश रोगग्रस्त हो, पीड़ित हो तो उनका उपचार इस भावना से करता है कि ये गुण हमें भी प्राप्त हों। उसकी नज़र में सभी की पीड़ा अपनी जैसी है, प्रसव की पीड़ा एक बच्चों की माँ ही सही तरीके से जान सकती है एक कुंआरी कन्या या पुरुष नहीं। वह उपचार करने में जरा सी भी ग्लानि नहीं करेगा उपचार करते हुए प्रेम करेगा।

जिस तरह चाकू से ऊँगली कट जाने प पीड़ा, एक बार हो जाने पर सब लोग मिलकर भी उसे समझाएँ तब भी वह यह स्वीकार नहीं कर सकता कि ऊँगली कटने पर पीड़ा नहीं होती ऐसे ही परमात्मा की बात में वह अमूढ़ रहता है, मूढ नहीं होता दूसरी बात, वह सत्य के अलावा किसी की भी बात मानने को तैयार नहीं होगा।

यदि किसी धर्मात्मा से कर्मोदय वशात् कोई गलती हो गई है तो उसे देखकर भी उसका उपचार तो करेगा पर किसी तीसरे से कहकर नीचा दिखाने की इच्छा से उनकी निंदा-आलोचना नहीं करेगा दूसरी बात कोई अधर्मी धर्म के भेष में भी गलती करता है तो उसे भी छुपाने का प्रयास करेगा क्योंकि वह जानता है धर्म की हँसी में सत्य की खिल्ली उड़ेगी और परमात्मा के प्रति लोगों की श्रद्धा टूट जायेगी।

यदि कोई सत्य के पथ पर चल रहा था कुछ कर्मोदय से वह असत्य के पथ पर पहुँच गया तो सत्य पाने वाला उसे समझा बुझाकर सत्य की राह पर लगायेगा या ऐसा कहें, वह किसी को भी सत्य से असत्य में जाते नहीं देख सकता है।

सत्य पाने वाला हमेशा जो सत्य को पाने के इच्छुक हैं उन्हें हमेशा स्नेह से सत्य का स्वरूप बतायेगा तुम भी सत्य को उपलब्ध होओ ऐसी भावना कर ऐसे जूनियर लोगों से तहेदिल से प्रेम करेगा। जिससे उन्हें भी सत्य की प्राप्ति हो सके।

सत्य पाने वाला ऐसे काम करेगा व करवायेगा जिससे परमात्मा का नाम, सत्य की प्रशंसा, धर्म का आचरण वे नास्तिक लोग भी कर उठें जो धर्म को बेकार की चीज समझते हैं। वह धर्म को बदनाम नहीं होने देगा धर्मी को बदनाम नहीं होने देगा, हमेशा प्रभावना के कार्यो में तत्पर रहेगा।

एक धर्मात्मा ही है जो नास्तिकों के दिल में अपने क्रिया-कलापों के द्वारा धर्म का बीज अंकुरित कर सकता है धर्मी, यह काम न कर सका तो दुनियाँ में कोई भी नास्तिक को आस्तिक नहीं बना सकता है। जितने भी नास्तिक, आस्तिक बनते हैं, बने हैं, बनेंगे वे सब आस्तिक के पास आकर ही आस्तिक्यता को उपलब्ध होंगे।

सत्य को प्राप्त हुआ व्यक्ति किसी दूसरे के पास जाकर नहीं पूछेगा हमें सत्य प्राप्त है या नहीं। सत्य स्वयं ही जानता है कि **मैं सत्य हूँ या नहीं जो सत्य की उपलब्धि को न जान सके तो वह सत्य है नहीं। असत्य वाला ही दूसरों से पूछेगा कि हमें सत्य है या नहीं सत्य जिसे प्राप्त होगा वह संसार से उदास सा रहेगा उसकी खाने-पीने, रहने-भोगने की तमन्ना समाप्त हो जायेगी।** वह हमेशा परमात्मा के रूप में खोया-खोया सा रहेगा कहीं एकांत स्थान मिलने पर उसे खुशी होगी लोगों के साथ होने पर वह एकान्त की चाह में स्वत: ही रहेगा। **वह कभी पक्षपात नहीं करेगा, हमेशा सत्य काही प्रतिपादन करेगा।**

सत्य प्राप्ति के बाद हमें प्रत्येक मंत्र की सिद्धि हो सकती है, आकाश में जमीन की तरह चलने की ऋद्धि हो सकती महाभारत के संजय की तरह दिव्यदृष्टि हो सकती है, हनुमान की तरह आकाश में गमन करने की कुव्वत हो सकती है लेकिन इसके अभाव में एक भी चीज की उपलब्धि नहीं हो सकती है, यहाँ तक कि सत्य आने पर हम दूसरे के मन की बात को भी जान सकते हैं अपना और सबका भविष्य भी जान सकते हैं ऐसा कुछ भी नहीं जो सत्य से न मिल सके।

अंधी श्रद्धा कैसी ?

परमात्मा और संत को छोड़कर हमसे कोई कुछ भी सत्य से विपरीत कहे और हम उसे बिना सोचे समझे, बिना खोजे ही उसे सत्य मान लें और पक्का मान लें तो समझना ये हमारी अंधी श्रद्धा है, श्रद्धा एक ऐसी चीज है जो सारे जीवन के व्यवहार को बदल देती है, अंधी श्रद्धा वे ही लोग करते हैं जो स्वयं की आँख, स्वयं का विवेक, स्वयं की सोच नहीं रखते हैं। अंतरंग की आँख से अंधे होते हैं। अंधी श्रद्धा में भेड़ों की भीड़ होती है, इसकी कोई मंजिल नहीं होती ये श्रद्धा दौड़ती तो है लेकिन इसे कोई इनामी खिताब नहीं मिलता, बदनामी और बेइज्जत मिलती है। अपनी अंतस् की आँख खोले बिना जो-जो भी स्वीकार किया जायेगा वो सब अंधी श्रद्धा ही होगी। श्रद्धा के हाथ-पैर नहीं होते हैं लेकिन श्रद्धा हाथ-पैर चलवा देती है।

अंधी श्रद्धा में हमें भविष्य में दोनों आँखे अंधी मिलें तो कोई आश्चर्य नहीं क्योंकि अंधे वे ही होते हैं जिन्हें अंधी श्रद्धा प्रगाढ़ होती है। संसार में जो भी लूले-लँगड़े-अंधे-रोगी-कुबड़े अशोभनीय शरीर वाले, कुरूपी होते हैं ये सभी अंधी श्रद्धा के परिणाम है, अंधी श्रद्धा वालों को गुणों से प्रेम नहीं व्यक्तिगत प्रेम होता है।

अंधी श्रद्धा व आँख वाली श्रद्धा में अन्तर

एक अंधी श्रद्धा वाला और आँख वाली श्रद्धा वाला दोनों ही मकान को मकान कहते हैं दोनों ही अपनी पत्नी को अपनी कहते हैं, दोनों ही घर में रहते हैं, दोनों ही अपने बच्चों को अपना ही कहते हैं लेकिन दोनों के सोच में भारी अंतर है। एक अंदर से भी इन्हें अपना समझता है- एक अंदर से अपना नहीं समझता। एक इन्हें संयोग समझता है, एक यही ज़िन्दगी है खाओ-पीओ-मौज उड़ाओ ये समझता है।

अंधी श्रद्धा और आँख युक्त श्रद्धा वाले दोनों ही पूजन एक सी, एक ही भगवान के पास, एक जैसी द्रव्य से करते हैं, एक ही मन्दिर में एक ही जगह करते हैं लेकिन दोनों के भावों में जमीन-आसमान का अंतर है, एक पूजन रूढ़िवादिता की तरह करता है कि ऐसा हमारे कुल में होता रहा है लेकिन एक अपने भावों की विशुद्धिएवं गुणों को प्राप्त करने के लिए करता है, एक समाज में इज्जत ख्याति पाने के लिए करता है लेकिन एक गुणों में आनंदित होने के लिए करता है। **एक देखा-देखी के लिए धर्म करता है, एक स्वयं को देखने और जानने के लिए धर्म करता है।**

दोनों श्रद्धान वालों का व्यवहार भले ही एक सा हो लेकिन **एक का व्यवहार उसकी मजबूरी है और दूसरे का व्यवहार कर्त्तव्य रूप हो जाता है, एक खाना-पीना रहने को ही जीवन समझता है, एक यहाँ रहने के कारण मजबूरी में खाता-पीता है, एक खाता है तो खुशी मनाता है, एक खाता है तो आँसू बहाता है।**

जिसकी **आँख खुली है उसका हर सोच ही शास्त्र बन जाता है, उसकी हर बात प्रेरणा बन जाती है लेकिन अंधी श्रद्धा में हर सोच ठोकरें लगाने वाली होती हैं,** उसकी क्रिया में शास्त्र नहीं शस्त्र चलते हैं, उसकी हर बात प्रेरित है, प्रेरणा नहीं बनती।

सत्य पाने वाले का ज्ञान प्रामाणिक

सत्य उसे ही प्राप्त होगा जिसके पास हर बात को सभी तरह से समझने की क्षमता हो वह जो भी कहता है सब तरह से अपनी बात को तौलकर कहता है, उसे सारे नयों का कथन समझ में आता है, वह भले ही कथन की अपेक्षा को किसी को बताए या नहीं बताए लेकिन उसकी भाव भासना में सभी अपेक्षायें झलकती हैं उसके ज्ञान में अनेकांत धर्म स्पष्ट झलकता है, उसकी हर बात या तो अनुभव से गुज़री हुई होती है या फिर श्रद्धान

से युक्त होती है, इसलिए उसका ज्ञान प्रामाणिक होता है।

सत्य को पाने वाला व्यक्ति अपने आपका सत्य और दूसरों के सत्य को भी समझता है एक गरीब व्यक्ति जब अमीर हो जाये तो अमीर की अवस्था से गुजर रहा है उसका अनुभव है, ज्ञान है और गरीबी हालत में कैसा लगता है ये भी जानता है दूसरों की गरीबी की पीड़ा भी जानता है **गरीब से हुआ अमीर गरीबी वह अमीरी दोनों को जानता है वैसे ही सत्य ज्ञाता अपने सत्य को भी जानता है और दूसरों के सत्य को भी जानता है।** असत्य के बाद किसी को सत्य उपलब्ध हुआ है तो वह सत्य को भी जानता है और असत्य को भी जानता है।

सत्य का खोजी हमेशा इन्द्रियों के सुखों में आनंद नहीं मानता ये तो दूसरों के सामने दिखावे के लिए भोग करता है, उसे हमेशा आत्मिक सुख में शांति अवस्था में ही आनंद आता है, वही उसके लिए सबकुछ है।

सत्य में दोष कैसे लगते हैं ?

धन उसके यहाँ से चुराया जाता है जिसके पास धन है, रोग उसी को होंगे जिसके पास शरीर है, रोग उसी को होगा जो वस्तु के पीछे दौड़ रहा है घर वही बसायेगा जिसके अन्दर वासनाओं के फुलिंगे उचक रहे होंगे, ठीक उसी प्रकार दोष उसी को लग सकते हैं जिसको सत्य प्राप्त हुआ है, इंसान यदि परमात्मा के स्वरूप में, परमात्मा के द्वारा कही बात में अथवा निर्ग्रन्थ गुरुओं की देशना को कषायवश या कर्मोदय के कारण गलत समझ लेता है या उसमें शंका करने लग जाय तो उसे दोष लग जाता है सत्य दूषित हो जाता है।

यदि सत्यज्ञानी संसार की वस्तुओं की चाह करने लगे और धर्माराधना में उसको परमात्मा से चाहे तो सत्य में दोष लग जाता है।

यदि कोई दिगम्बर संत जो सत्य के उपासक हैं, उनके शरीरादि को देखकर या उसमें रोगादि को देखकर उनसे ग्लानि करने लग जाये तो सत्य, दोषी हो जाता है।

यदि सत्य ज्ञानी कोई एकांत दृष्टि वाले की अथवा असत्य दृष्टि वाले की प्रशंसा करें उसे अपने जीवन का आदर्श बनाए या ऐसे लोगों की स्तुति पूजा करे तो सत्य में दोष लगता हैं।

स्वाभिमान–अभिमान–बहुमान

जब हम किन्हीं गुणों से विभूषित हों जब हमने कोई प्रशंसनीय कार्य किया है जब हमने कोई व्रतादि धारण किये हैं। गहन चिंतन–मंथन से ज्ञान का नवनीत प्राप्त किया है, उसके पाने में हमें एकांत में स्वयं में स्वयं के द्वारा जो अंतरंग खुशी हो रही है इसे स्वाभिमान कहते हैं। कोई अच्छी बातें हम छोटों के सामने रखते हैं जिससे वो भी इसे प्राप्त करें और अपने जीवन को उज्ज्वल बनाएँ तो इसे प्रेरणा कहते हैं ओर जब हम अपने से बड़ों की, गुरुओं की, भगवान की सबके सामने आश्चर्यजनक बातें कहकर लोगों में आश्चर्य पैदा करते हैं। गुरुओं की प्रशसा करते हैं तब उसे कहते हैं बहुमान। लेकिन जो बात हम दूसरों को नीचा दिखाने के लिए कहते हैं उसे अभिमान कहते हैं।

इसमें बहुमान–प्रेरणा और अभिमान में कम से कम दो होना जरूरी है, दो से अधिक भी हो सकते हैं लेकिन स्वाभिमान अकेले में होता है दो या दो से अधिक लोगों में नहीं होता है। कई लोग अभिमान को स्वाभिमान कहने की भूल भी करते हैं वे अपने अहंकार को और पुष्ट कर लेते हैं।

मद व घमण्ड में अंतर

अहंकार, Pride, उद्दण्ड, अभिमान ये सभी घमण्ड के ही पर्यायवाची नाम हैं अहंकार हमेशा जब कोई सामने हो उसे अपने से हीन साबित करने के लिए होता है लेकिन मद जब हम अकेले में अपने आपको दूसरे से अच्छा समझते हैं, दूसरों को नीचा समझते हैं तब यही मद कहलाता है, अकेले में गैर को नीचा समझना मद है, तो दूसरों को नीचा दिखा देना अहंकार है।

सत्य ज्ञाता में ये मद नहीं होते

सत्य जानने वाला कभी भी दूसरों के सामने उनको नीचा दिखाने के उद्देश्य से यह नहीं कहता कि मेरे पिता या दादा वैभवशाली थे तुम्हारे कुछ नहीं हैं, न ही अपने नाना–मामा आदि के बारे में ऐसा मद (घमण्ड) करता है।

यदि वह तपस्या भी करता है तो किसी को नीचा दिखाने के लिए नहीं, स्वयं को ऊपर उठाने के लिए करता है, उसके अंदर अपनी सुंदरता का मद नहीं होता न ही दूसरों के सामने इठलाता है। भले ही वह ज्ञानी है लेकिन जानता है कि हमें अभी पूर्णज्ञान नहीं है, पूर्णज्ञान के अभाव में मान करेंगे तो ज्ञान नष्ट होगा इसीलिए ज्ञान का घमण्ड उसे नहीं होता

है। यदि उसे धन भी प्राप्त हो जाये तो वह उस पर मदहोश होता हुआ इतराता नहीं है, यदि उसमें बहुत ताकत भी आ जाये तो किसी को पीटकर उसको घमण्ड नहीं दिखाता है। यदि उसे कई लोग मानते हों, उससे डरते हों, वो जो कहे वही करते हों तो वह सत्य का ज्ञाता इस पर अहंकार नहीं करता ।

मूढ़ता के तीन लक्षण :-

मूर्ख उसे कहते हैं जो पढ़ा-लिखा नहीं है जिसने शास्त्र नहीं पढ़े, शास्त्रों को नहीं सुना, जिसे भाषाओं का ठीक-ठाक ज्ञान नहीं है कोई जैसा कहे वैसा ही करने लग जाता है। मूढ वह है जो सब कुछ जानता है शास्त्रों को पढ़-पढ़कर दूसरों को सुनाता है, धर्म की बातें अच्छी बातें बताकर सबको धर्म में लगाता है, लेकिन स्वयं उसे मानता नहीं है वह मूढ है। जैसे आजकल के कुछ पण्डित

सत्य का ज्ञाता मूढ नहीं होता है, मूढ भी तीन तरह के होते हैं:-

1. **देव मूढ़ता:-** एक वो होते हैं जो रागी-द्वेषी भगवान और वीतरागी भगवान, देवाधिदेव-देव-कुदेव सबको एक समान मानते हैं सभी देवों का एक सा सम्मान देते हैं ये देव मूढ़ कहलाते हैं। इन्हें अच्छे-बुरे देव का, ऊँचे-नीचे देव का कोई भेद नहीं होता सभी को भगवान कहने लगते हैं:- ''गंगा गये तो गंगादास जमुना गये तो जमुनादास' ' ये देवमूढ हैं।

2. **गुरु मूढ़ता:-** दूसरे वो हैं जो सभी बाबाओं को महाराज कहने लगते हैं, कोई माँस खा रहा है, कोई चिलम लगा रहा है, कोई गालियाँ बक रहा है, कोई शराब पी रहा है, कोई निर्ग्रन्थ है शुद्धता से रह रहा है इन सभी को वह सच्चा गुरु मान लेता है। जो अपने पास कुछ नहीं रखता- राग-द्वेष से रहित कषायों से विरक्त होता है, सच्चा साधु वही है लेकिन गुरुमूढता वाला अच्छे बुरे सभी को एक सा ही समझता है, गधा-घोड़े में कोई अंतर ही नहीं समझता है। यह गुरुमूढता है।

3. **लोकमूढ़ता:-** गंगा में नहाने से पाप धूल जाते हैं, गंगा में डूबकर मरने पर बैकुण्ठ मिलता है, पर्वतों से गिरकर मरें तो धर्म होता है, आग में जिंदा जल जाने से समाधि होती है, जमीन में घंटों दबे रहना समाधि है, पेड़ों को पूजना, रागी-द्वेषी देवों को पूजना-बलि चढ़ाने से देवता प्रसन्न होते हैं आदि ये सभी लोक मूढ़ताएँ हैं लोक में किन्हीं अज्ञानियों ने कोई बात कह दी उसे कर दिखाया उस पर बिना सोचे-समझे, सत्य को जाने बिना उसे हृदय से स्वीकार लेना लोक मूढता है, इसको अपनाने वाले लोग संसार मूढ़ता में हैं।

हम स्वयं अपने आपको पहिचानें कहीं हमारे अंदर ये तीनों मूढताएँ समाहित तो नहीं हैं हमारे अंदर एक भी मूढता- मद पाये जाएँगे तो हमें सत्य नसीब नहीं हो सकता है। सत्य पाने वाला इन सभी मूढ़ताओं से बहुत ऊपर उठ जाता है उस पर अंधविश्वासी लोगों का भी कोई असर नहीं होता है। वह घी के समान होता है थोड़े से घी के ऊपर चाहे हजार टन दूध पटक दो,

सौ टन जल पटक दो पर उसे दोनों मिलकर नीचे नहीं दबा सकते वह घी ऊपर ही आ जायेगा। सत्य ज्ञाता की स्तुति सारे संसार ने सारे शास्त्रों ने खूब गई है।

कूपमण्डूक और हंस

गलत श्रद्धान का हृदय बहुत छोटा है जबकि सत्य का हृदय बहुत ही विशाल है सत्य मानसरोवर के हंस जैसा कि जबकि असत्य कूप मण्डूक (कुए के मेढक) की तरह है। सत्य प्राप्त होने के बाद श्रद्धान और सत्य की सीमा में कोई अंतर नहीं है, **सत्य न मिलने पर जो भी श्रद्धान होगा वह कूप मण्डूक की तरह ही होगा।**

एक बार की बात हैं एक कुए में एक मैढक रहता था कई माह उसे हो गए, कुए में रहते-रहते वह उसे ही विश्व समझने लगा जैसे एक बच्चे से दुनियाँ का विस्तार पूछें तो वह कहेगा घर और दुकान कितनी बड़ी दुनियाँ है। वैसे ही वह मैढक कुए को ही विश्व समझने लगा। एक दिन एकहंस मानसरोवर से उड़कर आया। कुए पर बैठ गया और सुस्ताने लगा तभी वह मैढक बाहर निकल आया और हंस को देखकर सोचने लगा यह तो बहुत ही अच्छा प्राणी है। मैढक ने पूछा-कहाँ से आये हो ? हंस ने कहा-समुद्र से मैढक ने कहा-कितना बड़ा है तुम्हारा समुद्र ? हंस बोला-बहुत बड़ा है। कितना बड़ा ? बहुत बड़ा है मैढक ने दोनों हाथ फैलाकर कहा-इतना बड़ा। हंस, हँसा और बोला-इससे बहुत बड़ा। मैढक ने दोनों पाँव व हाथ फैला दिये फिर कहा इतना बड़ा। हंस ने कहा- इससे भी बड़ा। मैढक ने कुए के पाट पर पूरी दम से छलांग लगाई-इधर से उधर के छोर पर पहुँच गया फिर पूछा इतना बड़ा है क्या तुम्हारा समुद्र। हंस, हँस हँसके लोटपोट हो गया और बोला इससे कई गुना बड़ा है अबकी बार मैढक पर रहा नहीं गया व बोला:-

हाथ पसारे पाँव पसारे और पसारी गात।

इससे बड़ा समुद्र तुम्हारा कहन-सुनन की बात।।

हंस उस मैढ़क की बुद्धि पर करुणाशील था सोच रहा था इस मैढक को जब तक समुद्र में ले जाया नहीं जायेगा तब तक इसे कैसे विश्वास हो सकेगा कि समुद्र कितना बड़ा है? कितना गहर हैं ? क्या कर सकता था ठीक वैसे ही एक पक्षपात करने वाला, राजनीति में पार्टियों की तरह समूह बनाकर स्वयं धर्मी समझने वाला मैढक की तरह एकांत को धम्र समझने वाला इतने विशाल समुद्र जैसे धर्म को अपने परम सत्य को कैसे अनुभव कर सकेगा ? कैसे प्राप्त कर सकेगा ? कूपमण्डूक और हंस जैसे होना ये हमारी श्रद्धा और ज्ञान के प्रतीक हैं।

उपसंहार

सत्य और श्रद्धान की शक्ल एक ही है अंतर इतना ही है कि सत्य वह है जो दुनियाँ के हर प्राणी को मान्य है। जैसे-परमात्मा भगवान को। ऐसा कोई नास्तिक भी नहीं होगा जो यह स्वीकार न करे कि दुनियां में भगवान नहीं है। वैज्ञानिकों से जब यह पूछा गया कि शरीर में खून का संचार किससे होता है? बोले हृदय से होता है। हृदय किससे धडत्रकता है? तो कहने लगे ईश्वरीय शक्ति से। ईश्वर होता है क्या ? हाँ, ईश्वर होता है। यदि ईश्वर नहीं होता तो ईश्वरीय शक्ति कैसे होती ? पूछा आकाश में बादल कैसे बनते हैं ? बोला ईश्वरीय शक्ति से। जो जन्मता है वह मरता भी है मौत सर्वमान्य सत्य है। सूरज गर्मी देता है या सर्वमान्य सत्य है।

श्रद्धान की शक्ल हमारी मान्यता निर्धारित करती है, श्रद्धान हमारी मान्यता की शक्ल है श्रद्धान है जिसे हम सभी बनाने के लिए और बदलने के लिए स्वंतत्र हैं सत्य वह है जिसे हम बदल नहीं सकते हम ही बदल जायें तो सत्य हमें मिल सकता है। हमारी मान्यता गलत है तो हम सत्य को भी गलत मानने में नहीं हिचकते।

श्रद्धान हमारी मौलिक स्वतंत्रता है इस पर कोई भी दबाव नहीं डाल सकता। कार्यों पर दबाव डाला जा सकता है, श्रद्धान पर नहीं, इसको बदलने में सबसे बड़े सहायक हम ही हैं और हम तभी बदल सकते हैं जब हमें, सत्य क्या है? और सत्य का अंतिम मुकाम क्या है? इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है? जो राह हम सही समझ रहे हैं वह राह मंजिल की ओर जाती है या नहीं जाती आदि इन सभी का निर्णय सही ज्ञान से होगा। इसके पहिले हम प्रयासरत तो रह सकते हैं प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

सत्य का फूल जिसके जीवन में खिल जायेगा वह परमात्म पद को अवश्य प्राप्त होगा, **सत्य मिलते ही हमारे हृदय के भावों में और परमात्मा के भावों में कोई अंतर नहीं रहता** गंगा जल यदि एक गिलास में भरा है- उसमें और गंगा में कोई अंतर नहीं है बस पानी की Quantity में अंतर है।

दिल नहीं हुआ दरिया, कुण्ड में समाए हैं,
देखकर समंदर भी, सरिता बन न पाये हैं।
नीम सा ये जीवन है और दिल करेला है,
राग-द्वेष भावों ने कैसा खेल खेला है।
कल भी तू अकेला था आज भी अकेला है॥

सत्यमेव जयते, सत्यं-शिवं-सुंदरम्

मुनिश्री द्वारा रचित साहित्य की तालिका

प्राप्ति स्थान

सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ, भिण्ड

श्री देवेन्द्र जैन
बड़ी बजरिया, बीना (सागर)
फोन – 07580–223344

मुकेश जैन
अजमेरी गेट, केकड़ी
फोन – 01467–220064

भजन

कर तू प्रभु का ध्यान बाबा कर तू प्रभु का ध्यान–2
निज घट में भगवान बाबा निजघट में भगवान।। टेक।।
काँटों में भी जीवन तेरा फूलों सा खिल जायेगा
खोज रहा है जिसको तू वह पल भर में मिल जायेगा
खुद को तू पहिचान बाबा खुद को तू पहिचान
कभी किसी का दिल दुःख जाये ऐसे बोल कभी मत बोल
घावों पर मलहम बन जायें ऐसे बोल बड़े अनमोल
कहलाता यह ज्ञान बाबा कहलाता यह ज्ञान–2
धन वैभव यह महल खजाना कुछ भी साथ न जायेगा
सुबह खिला जो फूल बाग में साँझ समय मुरझाएगा
कर ले धर्मध्यान बाबा करले धर्मध्यान–2
मात–पिता गुरुजन कर आदर धर्ममार्ग पर चलो सदा
गुरुजन की नित सेवा करना श्रावक का कर्तव्य कहा
पाओगे सम्मान बाबा पाओगे सम्मान
जिसको अपना कह आज तक हुआ कभी न वह अपना
जिसकी खातिर जिया आज तक वह निकला सुंदर
स प न ा
क्यों तू करे गुमान बाबा क्यों तू करे गुमान
राग–द्वेष भावों के कारण भवसागर में डूब रहा
गँवा रहा भोगों में जीवन फिर भी मन नहिं ऊँब रहा
क्यों बनता नादान बाबा क्यों बनता नादान
हिंसा–झूँठ–कुशील–परिग्रह–चोरी ये मत पाप करो
पाप विनाशक धर्म प्रकाशक णमोकार का जाप करो
हो सम्यक् श्रद्धान बाबा हो सम्यक् श्रद्धान–2